# रवीन्द्रनाथ ठाकुर

लावण्यप्रभा रॉय

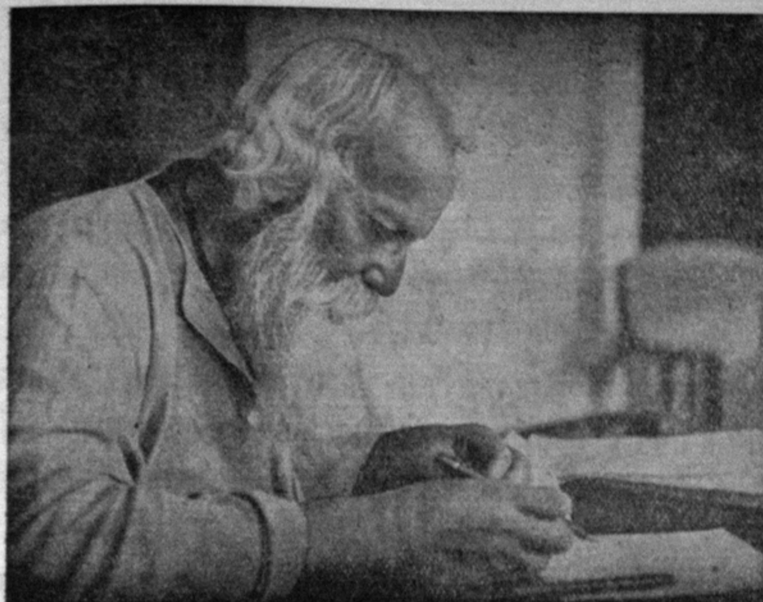
किताब महल (होलसेल डिवीज़न) प्राइवेट लिमिटेड
रजिस्टर्ड आफिस : ५६ ए, जीरो रोड, इलाहाबाद
बम्बई • कलकत्ता • दिल्ली • हैदराबाद • जयपुर • पटना

# चारू चरितावली—२



लेखिका : श्रीमती लावण्यप्रभा रॉय एम. ए.

प्रकाशक : किताब महल, ५६ ए, जीरो रोड, इलाहाबाद
मुद्रक : ईगल ऑफसेट प्रिन्टर्स, १५ थार्नहिल रोड, इलाहाबाद
आवृत्ति : प्रथम १८८३ शकाब्द मूल्य : १·५० न० पै०



## रवीन्द्रनाथ

आजकल हमारे स्वतन्त्र भारत के गाँव-गाँव में, नगर-नगर में—बालक-बूढ़े, स्त्री-पुरुष सब के मुख से "जनगणमन अधिनायक जय हे"—यह राष्ट्रीय गीत सुना जाता है। इस गीत के लिखने वाले कवि रवीन्द्रनाथ का नाम कौन नहीं जानता है ?

आज से सौ साल पहले १८६१ ई० में रवीन्द्रनाथ का जन्म हुआ था।

कलकत्ते के जोड़ासाँकू को 'ठाकुरबाड़ी' बहुत ही मशहूर है। उस बड़े भारी महल में ठाकुर परिवार के लोग कई पुश्त से रहते थे। उसी जोड़ासाँकू की ठाकुरबाड़ी में रवीन्द्रनाथ पैदा हुए थे। उनके पिता का नाम था देवेन्द्रनाथ ठाकुर और दादा का नाम था द्वारकानाथ ठाकुर।

द्वारकानाथ बहुत ही अमीर थे। उनकी करोड़ों रुपये की आमदनी थी और लाखों रुपये वह दान देते थे। उस समय की अँग्रेज सरकार उनको बहुत मानती थी। वह वर्षों विलायत में रहे और

उनकी शान, दौलत व सुन्दर बर्ताव से मोहित होकर महारानी विक्टोरिया ने उनको 'प्रिन्स' यानी राजकुमार की पदवी दी थी।

विलायत में रहने पर भी प्रिन्स द्वारिकानाथ अपने देश हिन्दुस्तान को बहुत चाहते थे और विलायत में भी वह हिन्दुस्तानी पोशाक पहनते थे।

उनके पुत्र देवेन्द्रनाथ पिता की तरह बहुत मशहूर थे। वह इतने ईमानदार व धार्मिक थे कि लोग उनको महर्षि कहते थे। धनी होकर भी वह सदा ईश्वर-भजन करते थे। उनका मन धन-दौलत में नहीं, बल्कि ईश्वर में ही लगा रहता था।

महर्षि देवेन्द्रनाथ के पुत्र हैं रवीन्द्रनाथ। रवीन्द्रनाथ अपने बाप-दादे से भी ज्यादा मशहूर हुए। सारी दुनिया उनको जानती है, उनकी लिखी हुई किताबों को पढ़ती है। दुनिया की करीब-करीब सभी भाषाओं में रवीन्द्रनाथ की किताबों का अनुवाद हुआ है।



पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर

रवीन्द्रनाथ कवि थे और साथ ही ऋषियों की तरह महात्मा भी थे। गान्धीजी रवीन्द्रनाथ को बहुत मानते थे। वह उनको 'गुरुदेव' कहकर पुकारते थे। ●

## भाई-बहन ●

रवीन्द्रनाथ के पन्द्रह भाई-बहन थे। जिस समय रवीन्द्रनाथ पैदा हुए थे उस समय उनके पिता चवालिस साल के थे। माँ थी सैंतीस साल की। दोनों बहुत तन्दुरुस्त थे। रवीन्द्रनाथ के बाद उनका

सबसे छोटा भाई बुधेन्द्र पैदा हुआ था पर बहुत बचपन में ही वह मर गया था। इसीलिये रवीन्द्रनाथ ही भाई बहनों में सबसे छोटे समझे जाते हैं।

जिस समय रवीन्द्रनाथ पैदा हुए थे उनके सब से बड़े भैया द्विजेन्द्रनाथ इक्कीस साल के थे। उनकी शादी भी हो चुकी थी। मझले भाई सत्येन्द्रनाथ उस समय उन्नीस साल के थे और पढ़ने के लिये विलायत जाने वाले थे। मझली भाभी ठाकुरबाड़ी में ही थीं। तीसरे भाई हेमेन्द्रनाथ रवीन्द्रनाथ से सत्रह साल बड़े थे। चौथे भाई वीरेन्द्रनाथ उस समय पन्द्रह साल के थे। बड़ी दीदी सौदामिनी देवी तब चौदह साल की थीं। उनकी शादी हो चुकी थी। भाञ्जा सत्य-प्रसाद रवीन्द्रनाथ से बड़े थे और भाञ्जी इरावती एक साल छोटी थी। ये दोनों रवीन्द्रनाथ के साथी थे। पाँचवें भाई ज्योतीन्द्रनाथ रवीन्द्रनाथ से तेरह साल बड़े थे। उस समय वह स्कूल में पढ़ते थे। मझली दीदी सुकुमारी बारह साल की थी। रवीन्द्रनाथ जब तीन महीने के थे तब इनकी शादी हुई थी। तीसरी बहन शरतकुमारी थी सात साल की, चौथी स्वर्णकुमारी पाँच और पाँचवी वर्णकुमारी चार साल की थीं। स्वर्णकुमारी के बाद एक भाई सोमेन्द्रनाथ करीब दो साल के थे।

जोड़ासाँकू की ठाकुरबाड़ी जैसे बहुत बड़ी थी वैसे ही उसमें रहने वाले लोग भी बहुत थे। विचित्र ढंग से वह मकान बनाया गया था। जैसे-जैसे जरूरत हुई मकान बढ़ाया गया। इसीलिये उसमें इतने आँगन, इतनी छतें व इतने कमरे हैं कि मानों मकान नहीं एक गोरखधन्धा है! बड़े आदमी भी उसमें खो जाते थे—बच्चों के लिए क्या कहना!

ठाकुरबाड़ी बहुत-से रिश्तेदारों से भरी रहती थी। लड़कियाँ शादी के बाद ससुराल नहीं जाती थीं—दामाद को ही वहाँ रहना

पड़ता था। इसीलिये लड़के-बहुएँ, लड़कियाँ-दामाद, पोता-पोती, धेवता-धेवती, नौकर-नौकरानी, खानसामा-बावर्ची, दीवान, गुमास्ता, पाइक, पहरेदार, गवैये उस्ताद वगैरह तरह-तरह के लोगों से घर भरा रहता था। सब का खाना-पीना एक साथ होता था। रसोईघर देखने लायक था। वहाँ दोनों वक्त सैकडों आदमियों के लिए खाना बनता था। नौकर-नौकरानियाँ खाना सब के अलग-अलग कमरे में पहुँचाया करते थे। इनके अलावा बहुत से रिश्तेदार भी ठाकुर-बाड़ी में घर के लोगों की तरह रहते थे।

इसी भरेपुरे परिवार में रवीन्द्रनाथ पैदा हुए थे।

हर बात में ठाकुरबाड़ी का एक खास ढंग था जो और लोगों से फर्क था। ठाकुरबाड़ी के लोगों के बोलने का, कपड़े पहनने का, चलने फिरने का अलग ही ढंग था। धोती के बदले में आदमी लोग पैजामा, कुर्ता, अचकन वगैरह पहनते थे। घर में भी मेज कुर्सी के बजाय फर्श व तकिए होते थे। ठाकुरों के रहन-सहन का ढंग था बिल्कुल मुगलों जैसा। उसी में धीरे-धीरे अँगरेजीपन आने लगा। रवीन्द्रनाथ के जन्म के बाद घर की आबहवा बदलने लगी थी। घर की स्त्रियाँ भी पहले से ज्यादा आजादी से घूमने-फिरने लगी थीं।

## ठाकुर वंश •

ठाकुर वंश के पूर्वजों के बारे में थोड़ी जानकारी जरूरी है।

मुसलमानों के राज्य के समय बंगाल के जैसोर जिले में ताहेर अली नाम के एक मुसलमान थे। ताहेर पहले हिन्दू ब्राह्मण थे। किसी मुसलमान लड़की से शादी कर मुसलमान हो गये थे। वह पहले नव-द्वीप के पास पिरलिया गाँव में रहते थे। इसीलिए लोग ज्यादातर उनको पीरअली खाँ कह कर पुकारते थे। वह जैसोर के नवाब खाँ

जहानग्रली के दीवान थे। कामदेव व जयदेव नाम के दो ब्राह्मण इनके साथ काम करते थे।

कहा जाता है कि एक दिन पीरग्राली खाँ रोजे से थे और नींबू सूँघ रहे थे। कामदेव ने देखकर मजाक किया था—"सूँघने से ग्राधा खाना होता है। रोजा टूट गया।" पीरग्रली मुसलमान होने पर भी ब्राह्मण खानदान के थे। वह मजाक समझ गए लेकिन उस समय कुछ नहीं बोले। फिर एक दिन एक जलसे में उन्होंने हिन्दू-मुसलमान सब को दावत दो। सब ग्राए। पीरग्रली खाँ के मकान में से उस समय गोश्त पकने की तेज खुशबू ग्रा रही थी। हिन्दू लोग यह सह नहीं सके। नाक ढँक कर वे वहाँ से चले ग्राए। पीर-ग्राली ने कामदेव की जबर्दस्ती पकड़ कर कहा—"सूँघ तो लिया ही है—ग्रब तुम्हारी जात कहाँ रहो ?" यह कहकर पीरग्रली ने ग्रपने ग्रादमियों से जबर्दस्ती उसको गोश्त खिला दिया। ग्रब उसको मुसलमान होना पड़ा। उसका नाम हुग्रा कमाल खाँ।

कामदेव यानी कमाल खाँ के ग्रौर दो भाई थे रतिदेव व शुकदेव। उस समय जिस ब्राह्मण की जात चली जाती थी वह 'पीरालि' कहलाता था। भाई कामदेव के पीरालि होने पर रतिदेव व शुकदेव को बहुत मुश्किल हुग्रा। ग्रपनी बहन व लड़की की शादी करना उनके लिए कठिन हो गया। शुकदेव ने बड़े मुश्किल से जगन्नाथ कुशारी के साथ ग्रपनी लड़की की शादी की। जात से गिरे हुए एक पीरालि ब्राह्मण खानदान में शादी करने के लिये जगन्नाथ कुशारी भी जात से निकाल दिये गए। वह ससुराल में ही ग्राकर रहने लगे।

यह जगन्नाथ कुशारी ही ठाकुरों के पूर्वज थे। इनके खानदान के पंचानन कुशारी व उनके चाचा ग्रपना गाँव छोड़कर गोविन्दपुर



गाँव में आ गये। यही गोविन्दपुर आगे चलकर कलकत्ता बन गया था। कुशारी परिवार जहाँ बस गये थे उसके आस-पास मछुए वगैरह रहते थे। वे इन लोगों को "ठाकुर" कहकर पुकारते थे क्योंकि वे ब्राह्मण थे। सभी कहते थे पंचानन ठाकुर। उनका यही नाम चालू हो गया। "कुशारी" सब कोई भूल गये। अँगरेज उस समय पहले पहल हिन्दुस्तान में कारबार चला रहे थे। उनके साथ काम करके ठाकुर परिवार भी बहुत धनी हो गए थे।

ठाकुर के किसी पूर्वज नीलमणि ठाकुर ने जोड़ासाँकू में ठाकुर-बाड़ी की बुनियादी डाली थी। नीलमणि के पुत्र थे रामलोचन। रामलोचन को कोई सन्तान नहीं थी। उन्होंने अपने भतीजे द्वारकानाथ को गोद लिया था। यह द्वारकानाथ ही हैं रवीन्द्रनाथ के पितामह।

## बचपन ●

भाई-बहनों में रवीन्द्रनाथ थे सबसे छोटे। उनका बचपन बड़े अजीब ढंग से बीता। अपनी माँ के साथ बालक रवि का विशेष सम्बन्ध नहीं था। उनकी बड़ी बहन ने उनको पाला-पोसा था। फिर जब वह थोड़े बड़े हुए, घर के कायदे के माफिक नौकरों ने उनकी देख-भाल की। भाई-बहन सब उनसे बड़े थे। उनके साथ खेलने वाला कोई नहीं था। वह अकेले खिड़की के पास बैठकर चुपचाप इधर-उधर देखा करते थे। दिन भर वह नील आसमान में उड़ने वाली चिड़ियों की ओर, खिड़की के नीचे पोखर में तैरने वाले हंस तथा सूरज की किरण में झिलमिल चमकने वाली नारियल के पेड़ों की पत्तियों की ओर, एकटक देखते रहते थे। उनका मन न जाने कहाँ-कहाँ भटकता फिरता था। कहानी की राजकुमारी की कजरारी आँखों के इशारे से शिशु रवि पहाड़-समन्दर पार कर न जाने किस वीरान चट्टान पर जा पहुँचते थे।

जो नौकर बालक रवि की देखभाल करता था वह बच्चे को एक जगह पर बिठा कर उसके चारों ओर खड़िया से घेरा खींच देता था ताकि बच्चा उस घेरे से बाहर न जाने पावे। उस घेरे में बच्चे को बिठाकर वह नौकर घंटों के लिये लापता हो जाता था। बेचारा बच्चा डर के मारे उस घेरे से बाहर पैर नहीं रखता था। वहीं बैठ कर चुपचाप अपने मन में न जाने क्या सोचता था—स्वप्न से भरी दो बड़ी-बड़ी आँखों से दुनिया देखा करता था।



खेलने का साथी उसका कोई नहीं था—तब भी वह मन ही मन अजीब खेल खेलता था। उसके महल के आँगन में एक बहुत पुरानी नवाबी ढङ्ग की पालकी पड़ी थी। बच्चा रवि सब की आँख बचा कर कभी-कभी उस पालकी का दरवाजा बन्द कर उसमें बैठा रहता था। वह सोचता था यह पालकी नहीं बल्कि एक मोरपंखी नाव है जो लहरों की हिलोरों के साथ हिलती-डोलती उसे लेकर न जाने कहाँ चली जाती है।

कभी बालक सोचता था—"अगर मुझे एक किश्ती कहीं से मिल जाय तो मैं सारी दुनिया घूम आता।" फिर वह सोचता था—"राम की तरह मैं भी वन में जा सकता हूँ—पर मेरे साथ कौन जाएगा ? लक्ष्मण भाई मेरा कहाँ है ?" नौकरों के कड़े शासन से ऊब कर बालक सोचता था—"सड़क पर घूमने वाले पहरेदार या फेरीवाले भी मजे में हैं ! जहाँ मन होता जा सकते हैं। काश, मैं भी पहरेदार या खोंचावाला हो जाता तो रात-रात भर, दिन-दिन भर सड़कों पर घूमता—कोई मुझसे कुछ न कहता।"

इसी तरह स्वप्न देखकर बालक रवि का बचपन बीता। बचपन में उनके मन में जो बातें आती थीं—बड़े होकर उन्होंने अपनी कविता में उन्हीं का बयान किया है।



कि रवीन्द्रनाथ ने क्लास में कभी इनके किसी सवाल का जवाब नहीं दिया। वह एक बहुत ही शरीफ घराने का बच्चा था, जहाँ उसने किसी के मुख से कोई गन्दी बात कभी नहीं सुनी।।

स्कूल के पढ़ाई की साथ-साथ घर की पढ़ाई भी जारी रही। सबेरे छः बजे से नौ बजे तक बालक रवि घर पर पढ़ता था। उससे पहले अन्धेरे में उठकर लँगोट बाँधकर हीरासिह नाम के किसी सिक्ख पहलवान से घर के दूसरे बच्चों के साथ कुश्ती लड़ना सीखता था। स्कूल से लौटकर शुरू होता था चित्रकला वा जिमनास्टिक या कसरत सीखना। शाम के वक्त शुरू होता था अँग्रेजी सीखना। इसी तरह बालक रवीन्द्रनाथ को दिन भर सख्त मेहनत करनी पड़ती था।


बचपन

हर रविवार वह गाना भी सीखते थे। साथ ही बीच-बीच में वह साइंस भी पढ़ते थे। एक पण्डित जी उनको संस्कृत भी पढ़ाते थे। दिन भर का थका-माँदा बच्चा जब शाम को अँग्रेजी पढ़ता हुआ ऊँघता था तब कभी-कभी उनके बड़े भैया उनकी दशा देख कर उन्हें छुट्टी दिला देते थे। बड़े होकर रवीन्द्रनाथ ने मजाक करके लिखा था कि छुट्टी पाते ही हम लोगों की आँखों से नींद ओझल हो जाती थी।

बैचपन में बालक रवि की तन्दुरुस्ती इतनी अच्छी थी कि वह कभी बीमार नहीं पड़ते थे। फिर भी कभी-कभी बालक जाकर माँ से कहता था कि पेट दुख रहा है! माँ सुनकर तनिक भी नहीं घबड़ाती थी; मुस्करा-



कर नौकर से कहती थीं—"जा, मास्टर साहब से जाकर कह दे कि रवि को आज वह छुट्टी दे दें; वह आज नहीं पढ़ेगा।"

इसी तरह बालक रवीन्द्रनाथ शिक्षा पाता रहा। स्कूल में जो वह पढ़ता था उससे सौ गुना ज्यादा शिक्षा उसे घर पर मिलती थी। उस वक्त के जितने बड़े-बड़े विद्वान, कवि, गवैये थे— सभी का ठाकुरबाड़ी में आना-जाना था। उन्हीं लोगों के कारण ठाकुर बाड़ी का वातावरण ऐसा सुन्दर था कि बालक रवि बचपन से ही बड़ा सुशील व तमीजदार हो गया था।

जब रवीन्द्रनाथ केवल सात-आठ साल के थे तभी से वह कविता लिखते थे। उनकी उन तुकबन्दिओं को सुनकर बुजुर्ग लोग मुस्कराते थे। लेकिन उनके बड़े भाई सोमेन्द्रनाथ उनको बहुत प्रोत्साहित करते थे। सबको बुलाकर कहते थे—"देखो, रवि ने कैसी सुन्दर कविता लिखी है।"

बचपन की तुकबन्दी ही थी विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के कविता लिखने का श्रीगणेश। ●

## घर से बाहर ●

बचपन में एक बार रवीन्द्रनाथ को अपने घर से बाहर जाने का मौका मिला था। गंगा के किनारे एक बाग में वह अपने परिवार के और लोगों के साथ कुछ दिन रहे। उस समय वह आठ साल के थे। वहाँ वह बहुत खुश थे। नौकरों के घर के सामने कई अमरूद के पेड़ थे। उन्हीं पेड़ों की आड़ में से गंगाजी का जल नजर आता था। कभी-कभी दो-एक किश्ती भी दिखाई देती थी। बालक रवि खेल-कूद भूलकर घंटों वहाँ बैठकर गंगाजी का बहाव



देखा करता था। शहर से बाहर इस बाग में आकर भी रवीन्द्रनाथ को घूमने-फिरने की आजादी नहीं मिली थी। लेकिन इसलिये बालक जरा भी दु:खी नहीं था। जी भरकर वह गंगाजी को देखता था और किश्तियों में मन ही मन सवार होकर न जाने कहाँ-कहाँ चला जाता था।

कुछ दिन बाद वे लोग बाग से शहर अपने घर लौट आए। फिर नियम से पढ़ना-लिखना शुरू हुआ।

बचपन में रवीन्द्रनाथ का अपने पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ से मेल-मिलाप बहुत कम था। महर्षि उस समय अक्सर घर पर नहीं रहते थे। पहाड़ों पर भजन-पूजन करते थे। जब कभी वह कुछ दिन के लिये जोड़ासाँको के मकान पर आते थे घर में चहल-पहल मच जाती थी। मकान के जिस तरफ वह रहते थे, बच्चों का उधर जाना मना था। रवीन्द्रनाथ भी पिता से दूर-दूर ही रहते थे।

उस समय अभी-अभी रवीन्द्रनाथ का जनेऊ हुआ था। उनका मुंडन हुआ था। जब उनके मन में यह परेशानी थी कि गंजा सिर लेकर स्कूल कैसे जाएँगे—उसी समय एक दिन उनके पिता ने इत्तला दी कि उनको अपने पिता के साथ हिमालय पर्वत पर जाना होगा। उस समय रवीन्द्रनाथ की उम्र ग्यारह साल की थी।

पिता के साथ रेलगाड़ी में चढ़कर हिमालय पर्वत की ओर जाएगा—यह सोचकर बालक का मन आनन्द से नाच उठा। वह तैयार होकर रेलगाड़ी में बैठ गए। जीवन में अब पहली बार रवीन्द्रनाथ पोशाक पहने थे। इससे पहले रवीन्द्रनाथ का रहन-सहन बहुत ही सीधा सादा था। बहुत ही सादे कपड़े—मामूली कुर्ता व पैजामा पहनते थे। न जूते थे न मोजे। जाड़े के दिनोंमें एक कुर्ते के ऊपर दूसरा सूती कुर्ता ही बहुत समझा जाता था। कभी-कभी पैर में चप्पल डालते थे। घर का दर्जी



कुर्ते में कभी जेब नहीं डालता था क्योंकि वह जानता था कि जेब में रखने लायक कोई चीज इन बच्चों के पास नहीं थी। इस बात पर बालक रवीन्द्रनाथ बहुत चिढ़ जाता था क्योंकि सभी बच्चों के पास पैसे न भी हों—जेब में रखने लायक कूड़ा-कर्कट कुछ न कुछ होता ही है। बड़े होकर ही रवीन्द्रनाथ ने धन-दौलत का चेहरा देखा।

हिमालय जाते समय रवीन्द्रनाथ ने जिन्दगी में पहली बार जरी के कपड़े पहने। सिर के लिये थी जरी की टोपी। शानदार पोशाक हन कर बालक रेल पर सवार हो गया। गाँव, मैदान, नदी-नहर पार कर गाड़ी तेजी से भाग रही थी। बालक का मन भी उसी के साथ भाग रहा था।

रास्ते में रवीन्द्रनाथ पिता के साथ बोलपुर नाम के गाँव में कई दिन ठहरे थे। बोलपुर था छोटा-सा एक गाँव। महर्षि देवेन्द्र नाथ को यहाँ का वातावरण बहुत पसन्द था तभी तो उन्होंने यहाँ पर जमीन खरीदी थी। उस समय रवीन्द्रनाथ दो साल के थे। वहाँ पर रहने के लिये देवेन्द्रनाथ ने एक छोटा-सा पक्का मकान बनाया था।

शाम के वक्त ये लोग बोलपुर पहुँचे। उस समय अन्धेरा हो रहा था। रवीन्द्रनाथ को चारों ओर का दृश्य स्पष्ट दिखाई नहीं दिया। सवेरे उठकर उन्होंने आँखें खोलकर, जो भर कर चारों ओर देखा। देख कर उनको बहुत आनन्द हुआ। यहाँ पर नौकरों का शासन नहीं था। चारों ओर मैदान था। वहाँ रवीन्द्रनाथ जब जो चाहता था घूमते थे। मैदान में से पत्थर लाकर पिताजी को दिखाते थे। उनके पिताजी भी खुश हो जाते थे। वहाँ मैदान में एक जगह पर एक छोटा-सा झरना था। बालक उसे देखकर बहुत खुश होता था। उसी जल में नहाता था और वही पीता भी था। यहाँ के वीरान मैदान में एक नारियल के पेड़ के नीचे पैर फैलाए बैठकर बालक रवीन्द्रनाथ कविता भी लिखता था।



बोलपुर से साहबगंज, दानापुर, इलाहाबाद, कानपुर वगैरह होते हुए ये लोग अमृतसर पहुँचे। वहाँ महीना भर रह कर डलहोजो पहाड़ पर गए।

यहाँ पर उनका मकान पहाड़ की चोटी पर था। रवीन्द्रनाथ यहाँ पर बिल्कुल आजाद व बहुत खुश थे। दिन भर वह घर के आसपास पहाड़ व जंगल में घूमते थे। हाथ में उनके रहती थी केवल एक लम्बी लाठो।

वहाँ पर उनके पिताजी उन्हें पढ़ाते भी थे। बहुत सबेरे अन्धेरे में वह उठते थे। फिर मुँह हाथ धो कर संस्कृत पढ़ने बैठ जाते थे। जब सूरज निकलता था उनके पिताजी उनको साथ लेकर प्रार्थना करते थे। फिर दूध पीकर दोनों घूमने जाते थे। लौट कर घंटा भर अँग्रेजी पढ़ते थे। फिर बर्फीले पानी से उनको नहाना पड़ता था।

दोपहर को खाने-पीने के बाद उनके पिताजो फिर उनको पढ़ाते थे। पर उस समय बालक रवीन्द्रनाथ को बहुत नींद आने लगती थी। वह ऊँघने लगते थे। तब उनके पिताजी उन्हें छुट्टी दे देते थे। छुट्टी पाते ही बचपन को तरह अब भी उनकी आँखों से नींद भाग जाती थी। हाथ में लाठी लेकर वह पहाड़ पर दौड़-धूप करते थे।

हिमालय में रहते समय पिता से बालक रवीन्द्रनाथ को और एक ज्ञान को शिक्षा मिली थी। यह था ज्योतिषशास्त्र। शाम के वक्त अक्सर पिता पुत्र को आकाश के ग्रह नक्षत्रों के बारे में बताते थे। उज्ज्वल तारों की ओर देख-देख कर बालक का जी नहीं भरता था। बुढ़ापे तक रवीन्द्रनाथ के मन में इन नक्षत्रों के बारे में बहुत कौतूहल था।

पहाड़ पर वह पिता के साथ चार महीने रहे। फिर उनके पिताजी ने उनको किसी कर्मचारी के साथ कलकत्ता भेज दिया। ●



## घर पर ●

जब रवीन्द्रनाथ हिमालय से लौट आए तब उनके लिये घर का वातावरण बिल्कुल बदल गया। अब उनको नौकरों की देख-रेख में नहीं रहना पड़ता था। अब उन्हें बहुत कुछ आजादी दी गई थी। घर के भीतर जहाँ जी चाहता जा सकते थे। माँ के घर में मजलिस होती थी, रवीन्द्रनाथ वहाँ जम कर गपशप करते थे। शाम के वक्त भी घर की छत पर उनकी माँ शारदादेवी जो महफिल जमाती थी वहाँ रवीन्द्रनाथ अभी अभी जो देश घूमकर आए थे उसका बयान करते थे। उनकी माँ रवि के मुख से पहाड़ की बातें सुनकर बहुत खुश हो जाती थीं।

जैसे-जैसे घर पर रवीन्द्रनाथ को आजादी मिलती गई वैसे-वैसे उनके मन में स्कूल जाने का आग्रह कम होता गया। स्कूल उनके लिये मानो एक जेलखाना था। वहाँ पढ़ाई में जैसी सख्ती की जाती थी—कायदा-कानून भी वैसा ही सख्त था। स्कूल के वातावरण के साथ रवीन्द्रनाथ कभी अपने को खपा नहीं सके। उसी समय रवीन्द्रनाथ के मन में यह बात जम गई थी कि पढ़ाई के वक्त बच्चों के साथ ज्यादा सख्ती करने से फल उल्टा ही होता है। इसी लिये आगे चलकर जब उन्होंने शान्तिनिकेतन में अपना विद्यालय खोला तब वहाँ का वातावरण, शिक्षा की पद्धति, नियम वगैरह सभी फर्क थे। वह चाहते थे कि बच्चे नियम के भीतर रह कर भी निडर होकर, हँस-खेल कर विद्या सीखें।

इसके बाद तरह-तरह के बहाने से स्कूल से भागना ही रवीन्द्रनाथ का काम हुआ। बंगाल एकाडेमी से हटा कर अब रवीन्द्रनाथ को सेंट जेविअर्स में भर्ती करा दिया गया; पर वहाँ उनका मन नहीं लगा। उनके बड़े भाइयों ने बहुत कोशिश की पर सब बेकार



हुई। उनकी बड़ी बहन जिन्होंने माँ की तरह उनकी परवरिश की थो बहुत ही दुःखी व निराश हो गईं कि रवि मूर्ख होकर ही रहेगा। लेकिन स्कूल की पढ़ाई में उनका चित्त नहीं लगता था—इसलिये वह मूर्ख नहीं थे। घर पर उन्होंने बहुत पढ़ा था। इसलिये उनके पास कोई डिग्री न होने पर भी कौन कह सकता है कि रवीन्द्रनाथ दुनिया के विद्वानों के शिरोमणि में से एक नहीं थे ?

पढ़ने में उनका चित्त नहीं लगता था फिर भी बड़े होकर भी सेंट जेविअर्स के अध्यापकों में से दो-एक को वह बहुत श्रद्धा से याद करते थे। उनके आदर्श का रवीन्द्रनाथ के जीवन पर बहुत असर पड़ा था। उनमें से एक थे फादर डिपेनेराण्डा। वह स्पेन देश के रहने वाले थे। इसीलिये ठीक से अंग्रेजी नहीं बोल पाते थे। लड़के उनके पास ठीक से नहीं पढ़ते थे लेकिन वह लड़कों से कभी कुछ नहीं बोलते थे। एक दिन रवीन्द्रनाथ के क्लास के लड़के कुछ लेख लिख रहे थे। 'फादर' लड़कों के पीछे चक्कर काट रहे थे। रवीन्द्रनाथ चुप-चाप हाथ में कलम लेकर बेठे थे। मास्टर ने जब देखा कि वह कुछ नहीं लिख रहे थे तो एकाएक रवीन्द्रनाथ के पीछे आकर खड़े हो गए और झुककर उनके कन्धे पर हाथ रख कर बोले—"क्या हुआ ? तुम नहीं लिख रहे हो ? तुम्हारी तबियत ठीक है न ?" उनके कहने में विशेष कुछ नहीं था फिर भी रवीन्द्रनाथ जिन्दगी भर कभी उनको प्यारभरी बातें नहीं भूले।

इसी समय जब रवीन्द्रनाथ तेरह साल के किशोर थे उनकी माँ का देहान्त हो गया। बालक का मन शोक से उदास हो गया। अब उनको स्कूल भेजना और भी कठिन हो गया। स्कूल से छुड़ाकर घर पर ही उनकी पढ़ाई का इन्तजाम किया गया। घर पर वह दुनिया भर की किताबें पढ़ा करते थे। साथ-साथ कविता भी लिखते थे। कविता लिखने के साथ-साथ वह संगीत-चर्चा भी करते थे।



उनके घर पर उन दिनों में गाने-बजाने का बहुत रिवाज था। किशोर रवि भी उसी वातावरण में मग्न हो गया।

उनके घर पर हर वक्त बहुत बड़े-बड़े विद्वान ग्राते थे। उनके भाई लोग भी सब बड़े विद्वान व गुणी थे। उनका घर स्वर्ग जैसा सुन्दर व हँसी-खुशी से भरा रहता था। बड़े भाइयों में से कोई कविता लिखते थे तो कोई नाटक। कोई चित्र कला में मशहूर थे तो कोई गाने बजाने में। सबसे बड़ी बात जो इस घर में दिखाई देती थी वह था स्वदेश प्रेम। रवीन्द्रनाथ के पिता व भाई सभी बड़े देशभक्त थे। उस समय दूसरे लोग जब ग्रंग्रेजी रहन-सहन, हावभाव सीखने में मग्न थे तब ठाकुरबाड़ी की ग्राबहवा देशप्रेम से लबालब भरी थी।

रवीन्द्रनाथ के भाई ज्योतिरिन्द्रनाथ ने एक स्वदेशी सभा बनाई थी। रवीन्द्रनाथ इस सभा के सदस्य थे। इस सभा में सब कोई मिल कर यही चर्चा करते थे कि देश की चीजों का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल कैसे हो सकता है।

एक बार इन लोगों ने मिलकर स्वदेशी दियासलाई निकाली। पर बनाने में खर्चा इतना पड़ा कि कुछ भी फायदा नहीं हुग्रा ग्रौर वह दियासलाई जलती भी नहीं थी। लेकिन स्वदेशी सभा का काम जारी रहा।

रवीन्द्रनाथ के भाइयों ने मिलकर एक बार एक 'हिन्दूमेला' किया था। यह स्वदेशी चीजों की प्रदर्शनी थी। इसमें स्वदेशी शिल्प, साहित्य, संगीत-कला वगैरह की भी प्रदर्शनी हुई थी ग्रौर गुणी लोगों को इनाम भी दिये गये थे। इसी प्रदर्शनी में रवीन्द्रनाथ ने स्वदेश-प्रेम पर एक कविता लिखकर पाठ किया था। जनता के सामने पहली बार रवीन्द्रनाथ ने ग्रपनी कविता का पाठ यहीं किया था। लोगों को उनकी कविता बहुत पसंद ग्राई थी।



उस समय कलकत्ते की 'ठाकुरबाड़ी' सब बातों में अगुआ थी। 'ठाकुरबाड़ी' के लोग जो करते थे—लोग उसी की नकल करते थे। ठाकुरबाड़ी से उस समय 'भारती' नाम की एक मासिक पत्रिका निकलती थी। रवीन्द्रनाथ के बड़े भाई ज्योतिरिन्द्रनाथ ने अपने सबसे बड़े भाई द्विजेन्द्रनाथ को सम्पादक बनाकर यह पत्रिका निकाली थी। घर के लोग ही इस पत्रिका में लेख वगैरह लिखते थे। रवीन्द्रनाथ ने भी 'भारती' के लिये बहुत सुन्दर कविता की रचना की थी।

## ● अहमदाबाद में

जिस समय रवीन्द्रनाथ सत्रह साल के थे, उनके मझले भाई सत्येन्द्रनाथ ने रवीन्द्रनाथ को विलायत भेजना चाहा। पिता ने भी इस बात पर राय दी। सुनकर रवीन्द्रनाथ बहुत ही आश्चर्य में हो गए। उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि वह विलायत जा सकेंगे। उनके बड़े भाइयों ने जब देखा कि यहाँ रवीन्द्रनाथ के लिये कोई इम्तहान पास करना असंभव है तब उन लोगों ने सोचा कि विलायत जाकर वह बैरिस्टर बन जाय। अमीर खानदान का लड़का, देखने में भी सुन्दर, अक्लमंद भी था—उसके भविष्य के लिये चिन्ता करके उनके भाइओं ने ऐसा निश्चय किया था।

विलायत जाने से पहले मझले दादा सत्येन्द्रनाथ उनको अहमदाबाद ले आये। वहाँ पर वह हकीम थे। शाही बाग में उनकी कोठी थी। वह था किसी बादशाह का महल। महल के पास ही साबरमती नदी बहती थी। उस तरफ एक बड़ी-सी खुली छत थी। रवीन्द्रनाथ की भाभी उस समय अपने बच्चों के साथ विलायत में



थों। भाई जब अदालत चले जाते थे तब इतने बड़े महल में अकेले रवीन्द्रनाथ रह जाते थे। लोग कहते थे कि इस कोठी में भूत हैं। बहुत से कमरे खाली बन्द पड़े थे। रवीन्द्रनाथ अकेले इधर से उधर घूमते फिरते थे। इस कमरे में झाँकते थे तो दूसरे छज्जे पर से दूर पहाड़ व जंगल की हरियाली देखते थे। आगे चलकर रवीन्द्रनाथ ने 'क्षुधितपाषाण' नाम की मशहूर कहानी लिखी थी। वह कहानी इसी सुनसान महल पर लिखी गई थी। इसी तरह शाही बाग की कोठी में उन्होंने कई महीने बिताये। फिर मझले दादा के साथ विलायत रवाना हो गए।

## विलायत में

सत्रह साल की उम्र में रवीन्द्रनाथ विलायत गये थे। उस समय उनके मन की मिट्टी कच्ची थी। तभी विलायत में जितनी अच्छी-अच्छी बातें उन्होंने देखी थीं, जितनी अच्छी सीख उनको वहाँ सीखने का मौका मिला था—उनके मन पर उन सब की गहरी छाप पड़ी थी। बचपन से ही उनके मन में अपने देश व परदेश में कोई भेद नहीं था।

विलायत जाते समय रास्ते में वे लोग पहले इटली देश को गए। वहाँ से पैरिस। यूरोप में यह बहुत ही नामी शहर है। दुनिया भर के लोग पैरिस में घूमने आते हैं। वहाँ वे लोग एक बड़े भारी होटल में ठहरे थे। वह इतना बड़ा व शानदार था कि सत्रह साल के किशोर रवीन्द्रनाथ वहाँ घबरा गए।

विलायत जाने से पहले रवीन्द्रनाथ मन ही मन सोचा करते थे कि न जाने विलायत कितना सुन्दर देश होगा। लेकिन वहाँ पहुँच-



कर वह बहुत ही निराश हो गये । वहाँ हमारे देश की तरह सुनहरो धूप नहीं निकलती । जब देखो तब पानी बरसता, कुहरा छाया रहता । लेकिन वहाँ के लोग—स्त्री-पुरुष-बच्चे सभी बहुत जिन्दादिल हैं । रवीन्द्रनाथ को उनका जोश व खुशमिजाज बहुत पसंद आया । बचपन में रवीन्द्रनाथ को अपने घर पर भी घूमने-फिरने की आजादी नहीं मिली थी । यहाँ उनको यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि एक-एक बच्चा कितना आजाद है । जब तक वह कोई शरारत नहीं करता उसे कोई नहीं टोकता । वह अपने मन के माफिक खेलता, कूदता, नाचता-गाता है ।

विलायत में रवीन्द्रनाथ एक स्कूल में भर्ती हो गए थे । पहले दिन ही वहाँ के प्रधान अध्यापक ने रवीन्द्रनाथ को देखकर कहा—"तुम्हारा सिर कितना सुन्दर है !" बचपन से घर पर किसी ने कभी नहीं कहा था कि रवीन्द्रनाथ का चेहरा सुन्दर था । दूसरे भाई बहनों के मुकाबले में उनका रंग उतना साफ व चेहरा उतना सुन्दर नहीं था । यही पहला मौका था जब उनके चेहरे की तारीफ की गई थी । इसीलिये रवीन्द्रनाथ को यह बात याद रही ।

स्कूल के लड़के रवीन्द्रनाथ के साथ बहुत अच्छा बर्ताव करते थे । वे कभी-कभी चुपके से उनके जेब में सेब, सन्तरे वगैरह रख देते थे । एक परदेशी लड़के से प्यार जताने का यही उनका तरीका था ।

इस स्कूल से रवीन्द्रनाथ ने कई अँगरेज परिवार में रहकर पढ़ा । कई भाषा भी सीखीं । इस समय उनके मझले दादा हिन्दुस्तान लौट रहे थे । पिताजी के कहने पर रवीन्द्रनाथ भी उन्हीं के साथ देश लौट आए ।

विलायत में रहते समय रवीन्द्रनाथ ने संगीत की बहुत चर्चा



की थी। वहाँ के लोग उनका गाना बहुत पसन्द करते थे। बचपन से ही उनकी आवाज बहुत मीठी व सुरीली थी। वहाँ पर उन्होंने विलायती गाना भी सीखा था। आगे चलकर उन्होंने अपने कई गीतों में देशी सुर के साथ विलायती सुर मिलाया था।

विलायत में उन्होंने यूरोप की कई भाषाएँ सीखी थीं लेकिन वह अपनी बँगला भाषा भूले नहीं। विलायत में भी वह बँगला में कविता, लेख वगैरह लिखते थे और छापने के लिये घर पर भेज देते थे। ●

## कविता व गीत-रचना ●

विलायत से लौटकर रवीन्द्रनाथ कविता व गीत बनाने में मग्न हो गए। उस समय कविता लिखना व गीत लिखकर उसमें सुर देने के सिवाय रवीन्द्रनाथ का दूसरा कोई काम ही नहीं था।

उस समय रवीन्द्रनाथ की उम्र अट्ठारह साल की थी। घर का वातावरण भी कविता व संगीत से भरा था। उनके बड़े भाई ज्योति दादा दिन भर गाना-बजाना लेकर मस्त रहा करते थे। वह 'पिआनो' में धुन बजाते थे और रवीन्द्रनाथ का काम था उसी धुन पर शब्द बिठाकर गीत बनाना। महफिल खूब जमती थी। आनन्द से वक्त कटता था।

ज्योति दादा का एक शौक था—नाटक खेलना। वह खुद नाटक लिखते थे और भाइयों के साथ घर पर ही उसको दिखाते थे। ऐसे ही एक नाटक में रवीन्द्रनाथ ने 'अलीकबाबू' बन कर बहुत नाम किया था। वह देखने में सुन्दर तो थे ही। विलायत से लौटने पर वह और भी सुन्दर दिखते थे। गाने की आवाज भी उनकी बहुत मीठी थी। इसीलिए खेल बहुत जम गया था। जवानी की उमंग में



ज्योति दादा के साथ मिलकर वह हल्की सुनहरी हवा में मानो तैरते थे। उनके पैर जमीन पर रहते ही नहीं थे।

बचपन से जवानी के दिनों तक रवीन्द्रनाथ के जीवन पर जिन्होंने सबसे ज्यादा असर डाला था वह थे ज्योति दादा। ज्योति दादा रवीन्द्रनाथ के जीवन में सचमुच 'ज्योति' यानी रोशनी थे। ज्योति दादा न होते तो रवीन्द्रनाथ के मन के भीतर जो कमल था, उसकी पंखुड़ियाँ एक-एक करके खुल नहीं सकती थीं।

और एक शख्स जिससे रवीन्द्रनाथ को बहुत प्यार मिला था वह थीं नई भाभी—ज्योदि दादा की स्त्री। रवीन्द्रनाथ के लिये नई-भाभी थीं माँ, वहन, दोस्त सब कुछ। इनका नाम था कादम्बरी देवी। जब नई दुल्हन बनकर कादम्बरी देवी ठाकुरबाड़ी में आई थीं, उनकी उम्र केवल नौ साल की थी और रवीन्द्रनाथ सात साल के बालक थे। भाभी व देवर में दोस्ती जमने में देर नहीं लगी। दोनों एक दूसरे के साथी थे। बचपन से एक साथ खेलकर दोनों बड़े हुए थे। माँ शारदा देवी के देहान्त के बाद नई भाभी ही रवीन्द्रनाथ व उनके भाई बहनों की देखभाल करती थीं। रवीन्द्रनाथ के हरेक काम में नई भाभी उत्साह देती थीं। उनकी कविताओं की वही थीं समझदार तारीफ करने वाली। विलायत से लौटने के दो-तीन साल बाद नई भाई का एकाएक देहान्त हो गया था। नई भाई के कोई बाल-बच्चे नहीं थे। उन्होंने रवीन्द्रनाथ को ही बच्चे की तरह पाला था। उनकी मौत से रवीन्द्रनाथ बहुत दुखी हो गए थे। उन्होंने मानो दुबारा माँ को खोया। नई भाभी के शोक से रवीन्द्रनाथ ने 'पुष्पांजलि' नाम की कविताएँ लिखी थीं। और भी बहुत कविताओं में रवीन्द्रनाथ ने प्यार व श्रद्धा से भाभी की याद की। भाभी के नाम कविताओं को सौंपकर एक जगह पर रवीन्द्रनाथ ने लिखा था—"तुम्हारे ही पास बैठकर मैं कविता लिखता था, तुम्हीं को



सुनाता था। इन कविताओं में तुम्हारे ही स्नेह का स्पर्श है। आज मालूम नहीं तुम कहाँ हो ? लेकिन जहाँ भो हो वहीं से मेरी इन कवि-ताओं को देखना।"

## विवाह

पहली बार विलायत से लौटने के साल भर बाद रवीन्द्रनाथ ने एक बार फिर पढ़ने के लिये विलायत जाना निश्चय किया। वह रवाना भी हुए परन्तु मद्रास तक जाकर लौट आये। उनके पिता महर्षि उस समय मंसूरी में थे। रवीन्द्रनाथ वहीं चले गए और कुछ दिन वहीं पर रहे।

उस समय उनके ज्योति दादा व नई भाभी चन्दन नगर के किसी सुन्दर बाग में रहते थे। मंसूरी से लौटकर रवीन्द्रनाथ भी वहीं जाकर उनके पास रहे। इसी समय उनकी कई एक मशहूर कविता की पुस्तकें लिखी गई थीं।

१८८३ ई० में रवीन्द्रनाथ का विवाह हुआ। उस समय रवीन्द्रनाथ की आयु तेईस साल की थी। शादी होने के साथ ही पिता ने उनको जमीन्दारी की देखभाल में लगा दिया था। उनकी शादी में महर्षि नहीं आ सके। उनकी स्त्री का नाम था भवतारिणी देवी। अच्छे परिवार की होने के कारण गरीब होने पर भी महर्षि ने इसी लड़की को अपने पुत्र के लिए चुना था। शादी के समय लड़की की उम्र केवल ग्यारह साल की थी। 'ठाकुरबाड़ी' के लिए बहू का 'भवतारिणी' नाम बड़ा बेढब था। उन लोगों ने इस नाम को बदल कर बहू का नाम रखा मृणालिनी। वह थीं गाँव की गरीब, अपढ़ एक लड़की—रवीन्द्रनाथ के साथ जिसकी किसी तरह की बराबरी नहीं थी। लेकिन उस समय ऐसी ही शादियाँ की जाती थीं। महर्षि ने केवल लड़की का खानदान देखा था और कुछ नहीं।



रवीन्द्रनाथ ने भी बड़े प्यार से बहू को अपनाया था। उन पर व अपने बच्चों पर रवीन्द्रनाथ का बहुत प्यार था। शादी के बाद महर्षि ने छोटी बहू की पढ़ाई का इन्तजाम कर दिया था।

## भानुसिंह की पदावली

रवीन्द्रनाथ जब सोलह साल के युवक थे, उनके मन में एक बार ऐसा विचार आया कि पुराने जमाने के वैष्णव कवि विद्यापति वगैरह की तरह वह भी ब्रजभाषा में कविता लिखेंगे। एक दिन दोपहर को आसमान में घनघोर बादल छाया हुआ था। रवीन्द्रनाथ ने कमरे में पलंग पर लेट कर तख्ती पर लिखा—"गहन कुसुम कुंज माझे।"

इतना लिखकर उनका मन खुशी से भर गया। फिर उन्होंने इसी ढंग की बहुत-सी कविताएँ लिखीं। ये पत्रिकाएँ 'भारती' पत्रिका में छापी भी गईं। उन्होंने अपना नाम 'रवि' बदल कर भानु बनाया। दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है। बचपन की शरारत से उन्होंने यही जाहिर किया कि ये कविताएँ 'भानुसिंह' नाम के किसी मशहूर पुराने कवि की लिखी हुई हैं। लोगों ने भी इस बात पर विश्वास किया। इन कविताओं की बड़ी तारीफ भी हुई। बाद में पता लग गया कि 'भानुसिंह' और कोई नहीं—खुद रवीन्द्र ही हैं। तब लोगों को और भी आश्चर्य हुआ।

ये कविताएँ बहुत ही सुन्दर हैं। कौन कहेगा कि ये एक सोलह साल के युवक की लिखी हुई हैं। दो-एक नमूना देखिए :—

"गहन कुसुम कुन्ज मांझे, मृदुल मधुर बंशी बाजे
बिसरि त्रास लोक-लाज, सजनि, आओ आओ लो।"

राधा-कृष्ण के मिलन व विरह तथा सखी-संवाद पर ही ये कविताएँ लिखी गई थीं। सखी राधा से कह रही है—



सुन लो सुन लो बालिका, राख कुसुम मालिका,
कुञ्ज कुञ्ज फेरनु सखि, श्यामचन्द्र नाहीं रे।

श्रौर एक जगह पर कह रही है—

सजनि सजनि राधिका लो देख श्रबहुँ चाहिया,
मृदुलगमन श्याम श्रावे मृदुल गान गाहिया।

राधारानी के साथ कृष्णचन्द्र के मिलन का कैसा सुन्दर बयान है—

श्राजु सखि, मुहु-मुहु गाहे पिक कुहु-कुहु,
कुंजबने दुँहु-दुँहु दोंहार पाने चाय।
बचन मृदु भर-भर काँपे रिभ्र थर-थर,
सिहरे तनु जर-जर कुसुमबन माभ्र।
भ्ररई सिरे फूलदल जमुना बहे कल-कल,
हाँसे शशी ढल-ढल 'भानु' मरि जाय॥

प्रेम से गद्‌गद् होकर राधा कहती हैं—

को तुँहु बोलबि मोय ! ( बोलो, तुम मेरे कौन हो ! )

हृदयमाँह मभ्रु जागसि श्रनुखन,
श्राँख-ऊपर तुँह रचलहि श्रासन,
श्ररुए नयन तब मरम संग मम
निमिख न श्रन्तर होय—
को तुँहु बोलबि मोय !
'को तुँहुँ', 'को तुँहु' सब जन पुछई,
श्रनुदिन सघन नयंनजल मुछई,
याचे 'भानु' सब संशय घुचई,
जनम चरए पर गोय—
को तुँहु बोलबि मोय॥



आज भी लोग "भानुसिंह की पदावली" पढ़कर बहुत आनन्द पाते हैं। रवीन्द्रनाथ ने इन कविताओं में अपने से सुर देकर सुन्दर गीत बनाये हैं। अक्सर "भानुसिंह" के लिखे हुए इन गीतों को गाकर, नाचकर लोग राधा-कृष्ण की रासलीला रचते हैं। ●

## ● 'बालक' पत्रिका

१८८५ ई० में ठाकुरबाड़ी से 'बालक' नाम की एक मासिक पत्रिका निकाली गई। रवीन्द्रनाथ की मझली भाभी उस समय बच्चों की पढ़ाई के लिये कलकत्ते में थीं। उन्होंने बच्चों के लिये ही यह पत्रिका निकाली थी। वह चाहती थीं कि बच्चों की ही रचना इसमें रहे। लेकिन केवल बच्चों के लेख से कब तक एक पत्रिका चल सकती है? इसीलिये अन्त में उन्होंने रवीन्द्रनाथ को ही इसके लिये जिम्मेदार बनाया। रवीन्द्रनाथ भी 'बालक' में तरह-तरह के लेख देने लगे। 'बालक' पत्रिका मशहूर हो गई!

बच्चों के लिये लिखी हुई रवीन्द्रनाथ की बहुत सी मशहूर कविताएँ 'बालक' पत्रिका में ही पहले पहल छापी गई थीं। उनकी कहानी 'मुकुट' व बच्चों का उपन्यास 'राजर्षि' इसी 'बालक' में छापे गए थे। 'राजर्षि' की कहानी का 'प्लाट' उनको स्वप्न में मिला था। एक बार रवीन्द्रनाथ देवघर से कलकत्ता लौट रहे थे। गाड़ी में बहुत भीड़ थी। सोना असम्भव था। उन्होंने सोचा—इस मौके पर 'बालक' के लिये कहानी सोचूँ। सोचते-सोचते उन्हें नींद आ गई। स्वप्न में उन्होंने देखा—किसी मन्दिर की सीढ़ी पर खून का निशान देखकर एक छोटी-सी लड़की अपने बाप से पूछ रही थी—"बाप यह खून कैसे, कहाँ से आया?" मंदिर में देवी के सामने बलिदान दिया गया था—यह उसी का खून था। बाप ने कोई



जवाब नहीं दिया। रवीन्द्रनाथ की नींद खुल गई। जागकर वह मन ही मन खुश हो गए कि स्वप्न में भी उनको कहानी मिल गई। मन्दिर में पशुबलि नहीं होना चाहिये—देवी अपनी सन्तान के खून की प्यासी नहीं हैं। इसी विषय पर 'राजर्षि' उपन्यास लिखा गया था।

इसी समय रवीन्द्रनाथ कुछ दिन के लिये अपने मझले दादा सत्येन्द्रनाथ के पास शोलापुर गए थे। उस समय 'बालक' पत्रिका के लिये लिखने के सिवाय उन पर और कोई जिम्मेदारी नहीं थी। बड़े आनन्द से दिन बीत रहे थे।

कुछ दिन शोलापुर में रहकर जैसे वह कलकत्ता लौटे तो मालूम हुआ कि उनको फिर बम्बई जाना होगा। इस समय उनके पिताजी बीमार थे और हवा बदलने के लिये उनको समुद्र के किनारे किसी जगह पर जाना जरूरी था। इन्तजाम करने के लिये रवीन्द्रनाथ बम्बई गए व कई महीने बम्बई के रास बन्दोरा शहर में पिता के साथ रहे। वहाँ भी वह बराबर कविता, लेख वगैरह लिखते थे। वह चिट्ठी भी बहुत सुन्दर लिखते थे और उनकी चिट्ठियाँ छापकर कई पुस्तकें बनी हैं।

साल भर निकल कर 'बालक' पत्रिका बंद हो गई थी।

## कवि का दयालु स्वभाव ●

उस समय रवीन्द्रनाथ के जीवन में न कोई चिन्ता थी, न जिम्मेदारी। मजे से दिन बीते जा रहे थे। बहुत लोगों का उनके पास आना-जाना था। कोई कुछ काम के लिये आते थे, कोई कुछ। रवीन्द्रनाथ का स्वभाव बड़ा ही कोमल व दयालु था। वह भरसक किसी को 'न' नहीं कह सकते थे। दुष्ट व चालाक लोग उनकी भलमनसी का फायदा उठाते थे। रवीन्द्रनाथ जानबूझ कर चुप



रहते थे। उनसे किसी से कठोर शब्द कहा ही नहीं जाता था। धोखा देना किसे कहते हैं यह वह जानते ही नहीं थे। कितने लड़कों को वह पढ़ाई का खर्च देते थे—जो किसी विद्यालय में नहीं पढ़ते थे; झूठ कहकर उनसे रुपये ले लेते थे। एक बार किसी लड़के ने आकर उनसे कहा कि "बी० ए० पढ़ रहा था पर सिर के दर्द के मारे पढ़ नहीं पाता।" रवीन्द्रनाथ ने उसके इलाज के लिये तजवीज करना चाहा। लेकिन लड़के ने कहा—"मैंने स्वप्न में देखा है कि आपकी स्त्री गए जन्म में मेरी माँ थीं! उनका चरणामृत पीकर मैं अच्छा हो जाऊँगा।" इसी बहाने से मृणालिनी देवी का लड़का बनकर वह घर पर जमकर रहने लगा।। कवि के लिये उसको घर से निकलवाना मुश्किल हो गया था। इसी तरह लोग रवीन्द्रनाथ के दयालु स्वभाव से फायदा उठाते थे।

और केवल स्वभाव ही नहीं—कवि का चेहरा भी दया व कोमलता से भरा था। उस समय के किसी एक कवि ने रवीन्द्रनाथ को पहले-पहल देखकर लिखा था—"कल मैं रविठाकुर से मिलने गया था। सीढ़ी पर ही उनसे भेंट हो गई। मेरी आँखें मोहित हो गईं—मन आनन्द से भर गया। कैसा सुन्दर, सुकुमार चेहरा! छरहरा बदन, लम्बा कद, साफ रंग, नाक-भौं-आँखें सब कुछ सुन्दर! सिर के लम्बे घुँघराले बालों के गुच्छे कन्धे पर लटक रहे थे। पैर पर धोती की चुन्नट पड़ी हुई थी। मानों स्वर्ग से कोई देवता मुस्कराते हुए उतर आए हों!" नदी के तीर, पेड़ों की छाँह, मंद-मंद मीठी हवा, आम के बौर की भीनी खुशबू, कोयल की कूक, बसन्ती रंग की ओढ़ने की चद्दर, मौलसिरी फूलों की माला—इन्हीं सब में कवि खपने वाले थे। उस समय के बंगाली नौजवान रवीन्द्रनाथ के पीछे पागल थे और हर बात में उनकी नकल किया करते थे।



## कर्म-जीवन ●

अब तक रवीन्द्रनाथ ने अपने पर गृहस्थी की जिम्मेदारी नहीं ली थी। उनके पिता बहुत दिनों से ही उनको जमीन्दारी की देख-भाल के काम में लगाना चाहते थे। दो-एक महीने वह जमीन्दारी में जाकर रहते भी थे। पर पूरा-पूरा जिम्मा लेना वह बार-बार टाल देते थे। इसी तरह रवीन्द्रनाथ के जीवन के तीस साल बीत गए। अब वह बाल-बच्चों के बाप भी बन गए थे। अब और पिता का कहना टालना सम्भव नहीं था। वह अपने परिवार के साथ पूर्वी बंगाल के शिलाइदह की कोठी में जाकर रहने लगे।

शिलाइदह बहुत ही सुन्दर था। गंगा की शाखा नदी पद्मा के पास ही था शिलाइदह। बंगाल प्रान्त की नदियों में पद्मा बहुत ही मशहूर है। इसका बहाव इतना तेज है, लहरें भी इतनी ऊँची उठती हैं कि हर साल किनारे के कितने गाँव, कितने मकान टूट कर पद्मा में गायब हो जाते हैं। लोग इसे कहते हैं राक्षसी पद्मा। हर बरसात को छोड़कर दूसरे समय यह नदी शान्त रहती है। रवीन्द्रनाथ कभी कोठी में रहते थे और कभी नाव पर गाँव-गाँव में घूमकर रिआया के सुख-दुख की खबर लेते थे। कभी उनकी स्त्री व बच्चे उनके साथ होते थे—ज्यादातर वह अकेले ही रहते थे! पद्मा नदी मानो रवीन्द्रनाथ की साथी थी। कितनी ही कवितायें उन्होंने पद्मा के जल पर रहते हुए लिखी थीं। नाव पर घूम-घूमकर उन्होंने गाँवों की सच्ची दशा देखी थी। बहुतों को ऐसा ख्याल है कि रवीन्द्रनाथ अमीर थे—गरीबों की दशा के बारे में कुछ नहीं जानते थे। यह सुनकर रवीन्द्रनाथ को बहुत दुख होता था। वह कहते थे—"जाकर मेरी जमीन्दारी में देखो, लोगों से पूछो; मेरी रिआया मुझे कितना चाहती है!" रिआया के साथ दिल खोल कर मिलना-



जुलना, उनका दुख दूर करना रवीन्द्रनाथ को बहुत पसन्द था। जब तक उन्होंने जमीन्दारी का काम नहीं किया था उनके मन में भय था। पर अब वह इसी काम में मग्न हो गए। गाँव के लोगों का सादा-सीधा रहने का ढंग रवीन्द्रनाथ को बहुत पसन्द आया। वह गाँव वालों के सरल चेहरे पर एक अजीब सौन्दर्य देखते थे। उन पर इन अपढ़ किसानों का कितना भरोसा था। उनका दिल भी इन लोगों के लिये रोता था।

## ● लेख, भाषण आदि

उस समय देश भर में अँग्रेज सरकार का देश के लोगों पर बुरा बर्ताव दिन पर दिन बढ़ रहा था। रवीन्द्रनाथ सब कुछ सुनते थे, अखबारों में पढ़ते थे, देखते थे। अपमान से उनका खून खौलने लगता था। १८९३ ई० में उन्होंने "अँग्रेज व भारतवासी" पर किसी सभा में एक लेख पढ़ा था। उसमें उन्होंने जोशीले शब्दों में कहा था—"अँग्रेज सरकार के हम आधीन हैं। वह हमारा अपमान करती है। हम उनसे भीख नहीं माँगेंगे; अपने हक का दावा करेंगे। अँग्रेजी सीख कर, अँग्रेजों की नकल कर हम सच्चा इन्सान नहीं बन सकेंगे। हमें सच्चा हिन्दुस्तानी बनना होगा। उसके लिए हमको अपने को तैयार करना होगा।"

अँग्रेज सरकार अपने फायदा के लिए हिन्दू व मुसलमानों के बीच भेद-भाव पैदा कर रही थी। रवीन्द्रनाथ ने उसका भी बहुत विरोध किया था। इसी समय रवीन्द्रनाथ ने अपनी मशहूर कविता "अब मुझे लौटाओ" लिखी थी। केवल कविता लिखकर उनका जी नहीं भरता था। चारों ओर लोग दुखी थे, अशान्ति फैली हुई थी—इस दशा में घर के कोने में बैठकर कविता लिखने में रवीन्द्र-



नाथ को लज्जा हुई। लोगों की सेवा के लिये उनका दिल रो उठा। अँग्रेज के सामने हिन्दुस्तानी सकुचा जाते थे, उनका अत्याचार मुख बंद कर सहते थे—इन कमजोरियों को देख कर रवीन्द्रनाथ तिल-मिला उठते थे। जोशीले शब्दों में लेख लिखते थे, भाषण देते थे। कमजोरियों के लिए हिन्दुस्तानियों को ही धिक्कारते थे, क्योंकि उन दिनों अँग्रेजों के हाथ से एक हिन्दुस्तानी को मार खाते देख कर दूसरे चुप रहते थे; डर के मारे कुछ नहीं बोलते थे। रवीन्द्रनाथ ने इस कायरपन की ही बहुत बुराई की थी। कभी-कभी गरीब लोगों पर अँग्रेज अफसर लोग बहुत अत्याचार करते थे। अँग्रेज लोग हिन्दु-स्तानियों को काले आदमी कहकर नफरत करते थे—उनको इन्सान नहीं समझते थे यह सब देख कर रवीन्द्रनाथ के मन में आग जल उठती थी।

'केशरी' पत्रिका में अँग्रेज सरकार के खिलाफ लेख लिखने के लिए बाल गंगाधर तिलक गिरफ्तार किये गये थे। उनका समर्थन कर रवीन्द्रनाथ ने भी वैसा ही लेख लिखना शुरू कर दिया। तिलक के मुकदमे की मदद के लिए उन्होंने चन्दा इकट्ठा किया था।

उस समय बंगाल प्रान्त के कई बड़े-बड़े आदमी अँग्रेजों के बड़े भक्त थे। वे लोग किसी भी सरकारी काम में बहुत रुपये देकर मदद करते थे। और बदले में 'रायबहादुर' वगैरह बन जाते थे। रवीन्द्रनाथ की कलम से इन लोगों पर बहुत स्याही छिड़की जाती थी।

अन्याय के विरुद्ध कवि के मन में कितनी घृणा थी, उस समय की लिखी हुई कविताओं में से उसका पता लगता है। ये कविताएँ "नैवेद्य" नाम की पुस्तक में छापी गई थीं। एक सच्चे भक्त की तरह उन्होंने इन कविताओं में ईश्वर से ही शिकायत व प्रार्थना की कि "हे भग-वन—हमें इन्सान बनाओ : हमारी कमजोरियों को दूर करो।



हमारा सिर ऊँचा रहे : हम भय से किसी के सामने झुकें नहीं। राजा होकर जो राजा का कर्त्तव्य कहीं करता उसको हम मानेंगे नहीं। सबको भाई समझकर सब की उन्नति में हम हाथ बटावें : अपने अधिकार का दावा करें : अपना कर्तव्य पूरा करें।" ●

## ● गृहस्थ रवीन्द्रनाथ

पहले ही कहा जा चुका है कि रवीन्द्रनाथ ने अपनी छोटी-सी बहू को बड़े प्यार से अपनाया था। वह थी घर की छोटी बहू—रवीन्द्रनाथ जिसे अक्सर 'छोटी' कहकर पुकारते थे। जब कभी रवीन्द्रनाथ घर से बाहर जाते थे 'घर के लिये, अपनी 'छोटी' व बच्चों के लिए उनका दिल रोता था। 'छोटी' से चिट्ठी का जवाब पाने में जब देर होती थी, रवीन्द्रनाथ उन्हें उलाहना देते थे। उनको समझाने की कोशिश करते थे कि उन लोगों के लिए उनका मन कितना व्याकुल होता है। स्त्री की चिट्ठी से उनका मन नहीं भरता था। वह चाहते थे कि मृणालिनी देवी सुबह-शाम-रात की छोटी सी छोटी हरेक बात उनको लिखें, दोनों के बीच कोई आड़ पर्दा न रहे। 'छोटी बहू' के पास लिखी हुई उनकी चिट्ठियों से पता लगता है कि रवीन्द्रनाथ का मन प्यार से कितना भरा था। उन्होंने कभी मृणालिनी देवी की छोटी-सी इच्छा को भी नहीं टाला। शिलाइदह के सुनसान वातावरण में रवीन्द्रनाथ बहुत खुश रहा करते थे लेकिन 'छोटी बहू' को वह जगह पसन्द नहीं थी। समझौता हमेशा रवीन्द्रनाथ ही करते थे क्योंकि वह सोचते थे अपनी स्त्री• व बच्चों को सुख देना उनका कर्त्तव्य है। वह शिलाइदह छोड़कर चले आए थे। ऊपर से कवि-कर्तव्य पूरा करते थे लेकिन मन के भीतर वह सदा अपने को बहुत अकेला महसूस करते थे। कवि होने के कारण ही ऐसा होता था। मन में पीर न होती तब वह इतनी सुन्दर कवितायें कैसे लिख पाते।



गृहस्थी के सैकड़ों झंझटों में रवीन्द्रनाथ सदा फँसे रहते थे। जमीन्दारी देखना, कारबार की देखभाल करना, कविता, कहानी, उपन्यास आदि लगातार लिखते रहना, मित्रों के लिये दौड़-धूप करना, नाटक लिखकर उसको दिखाने का सारा इन्तजाम करना—यही सब रवीन्द्रनाथ का काम था। आराम करना वह नहीं जानते थे। बुढ़ापे तक भी वह दिन भर काम करते थे और हर काम समय पर करते थे।

## कारबार में

रवीन्द्रनाथ की प्रथम सन्तान माधुरीलता या बेला १८८६ ई० में पैदा हुई थी। रवीन्द्रनाथ इसको बहुत प्यार करते थे। फिर दो साल बाद १८८८ ई० में पहला पुत्र रथीन्द्रनाथ हुए। तीसरी सन्तान रेणुका पैदा हुई थी १८९१ ई० में। चौथी मीरा १८९३ ई० में पैदा हुई थी। सब से छोटा लड़का शमीन्द्रनाथ १८९४ ई० में पैदा हुआ थे बचपन में ही इस बालक का देहान्त हो गया था।

शमीन्द्र के जन्म के बाद रवीन्द्रनाथ ने कारबार में दिल लगाया। उनके दो भतीजे बलेन्द्रनाथ व सुरेन्दनाथ ने 'ठाकुर कम्पनी' के नाम से कारबार खोला था। इन लोगों ने स्वदेशी कपड़े की दूकान खोली थी और साथ-साथ इनका जूट का भी कारबार चालू था। रवीन्द्रनाथ भी इन लोगों के साथ जुट गए। तीनों मिलकर बहुत जोश से कारबार चलाने लगे। इससे पहले भी एक बार शिलाइदह की कोठी में रवीन्द्रनाथ ने अमरीकी भुट्टा व मद्रास का बढ़िया धान पैदा करने की कोशिश की थी। साथ ही उन्होंने रेशम के कीड़े भी पाले थे। इस पर उनका बड़ा मजेदार अनुभव हुआ था। उन्होंने अपने मित्र को लिखा था कि—"न जाने अक्षयकुमार (रवीन्द्रनाथ के एक मित्र)

क्यों मेरे यहाँ रेशम के बीस 'पिल्लू' छोड़ गए थे; अब वे दो लाख बन गए हैं और हम सब घर के लोग इन पिल्लुओं को खिलाने के लिए पत्ती ला-ला कर परेशान हो गए, दस बारह आदमी दिन भर पत्ती लाते रहते हैं फिर भी पूरा नहीं होता। सब का खाना-पीना सिर पर पड़ा है।

कारबार अच्छी तरह चल रहा था। रवीन्द्रनाथ ने उस में रुपये लगाए थे और जरूरत पड़ने पर सलाह भी देते थे। उनका मुख्य काम था जमीन्दारी देखना। उसी के साथ वह कारबार में भी दिलचस्पी लेते थे।

इस बीच में सुरेन्द्रनाथ का ध्यान कुछ और काम में लग गया। कारबार का पूरा जिम्मा बलेन्द्रनाथ के ऊपर आ पड़ा। वह थे बड़े सादे सीधे स्वभाव के। उनके मैनेजर ने छलकपट कर कारबार को डुबो दिया—ऊपर से किसी को पता नहीं चला। इसी समय बलेन्द्रनाथ सख्त बीमार पड़ गये और कारबार की पूरी जिम्मेदारी रवीन्द्रनाथ के ऊपर आ पड़ी। इस समय रवीन्द्रनाथ को शिलाइदह व कलकत्ता दौड़ना पड़ता था क्योंकि रवीन्द्रनाथ उस समय शिलाइदह में थे। लेकिन कारबार का आफिस था कलकत्ते में। उनको बहुत दौड़धूप करनी पड़ी। इधर बलेन्द्रनाथ का देहान्त हो गया। उनका मैनेजर फरार हो गया। तब पता लगा कि कम्पनी को सत्तर-अस्सी हजार रुपये का घाटा हुआ। बाजार भर में चारों ओर कम्पनी का उधार हो गया। पूरा जिम्मा रवीन्द्रनाथ के ऊपर आ पड़ा। उन्होंने झटपट कारबार बंद कर दिया और बड़े-बड़े मुश्किलों से—दोस्तों से उधार लेकर, किताबों का "कापीराइट" बेचकर उस ऋण का चुकता किया। कहा जाता है कि अगर रवीन्द्रनाथ कारबार बंद न कर देते तो वह फिर खड़ा हो सकता था। लेकिन कार-

बार की परेशानी से रवीन्द्रनाथ ऊब गये थे। उन्होंने इसे बंद करना ही ठीक समझा।

इस समय रवीन्द्रनाथ को तरह-तरह की परेशानियों का सामना करना पड़ा। एक ओर था जमीन्दारी देखना, दूसरी ओर कारबार का हिसाब-किताब, बलेन्द्रनाथ को सख्त बीमारी की देखभाल व उसके लिए चिन्ता, बच्चों की पढ़ाई का इन्तजाम करना—सैकड़ों झंझट रवीन्द्रनाथ के सिर पर था। अशान्ति के इस वातावरण में रवीन्द्रनाथ कुछ लिख नहीं पाते थे। इसलिए उनका मन उदास हो जाता था। इसी समय केवल दिल बहलाने के लिए उन्होंने छोटी-छोटी कवितायें लिखी थीं जो "कविता" में छापी गयी थीं। ●

## शान्तिनिकेतन ●

आज दुनिया भर में शान्तिनिकेतन का नाम मशहूर है। शुरू-शुरू में यहाँ पर था एक सुनसान वीरान मैदान। चारों ओर पेड़-पौधे तो दूर, हरियाली का नाम व निशान भी नहीं था। मैदान के बीचोबीच दो छतिवन (सप्तच्छद) के पेड़ थे। एक दिन रवीन्द्रनाथ के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ बोलपुर स्टेशन से इसी मैदान में से होकर रायपुर जा रहे थे। कुछ देर के लिए उन्होंने इन दोनों बड़े-बड़े छतिवन की छाँह में खड़े होकर आराम किया था। उन्होंने चारों ओर नजर डाली। उस मैदान में कहीं पर कुछ नहीं था सिवाय ये दो छतिवन के पेड़। ऊपर नील आसमान, नीचे मीलों तक फैला हुआ सुनसान मैदान। महर्षि को यह जगह बहुत पसंद आयी। उन्होंने सोचा इस छतिवन की छाँह में बहुत अच्छा साधन-पूजन हो सकेगा। इसके बाद कई बार महर्षि ने इन्हीं छतिवन के नीचे डेरा डाला।

उस समय इस जगह का नाम था भुवनडाँगा। यहाँ पर डाकुओं

का अड्डा था। वे इस मैदान में राहगीरों पर डाका डाला करते थे। बोलपुर से इधर-उधर गाँव में जाने का दूसरा कोई रास्ता नहीं था। इसीलिए डाकुओं का बड़ा अच्छा मौका भी मिल जाता था। न जाने कितने आदमियों को मार कर डाकुओं ने इन छतिवन के पेड़ों के नीचे गाड़ रखा था। और इन्हीं छतिवन के नीचे महर्षि ने अपनी पूजा की वेदी बनाई। फिर डाकुओं का सर्दार डकैती छोड़कर महर्षि की सेवा करने लगा; जो डाकुओं का अड्डा था वही बन गया एक सुन्दर आश्रम।

महर्षि ने इस जगह का नाम दिया "शान्तिनिकेतन।" उन्होंने यहाँ पर छतिवन के नीचे की वेदी के आसपास एक आश्रम बनाया। उस मैदान की जमीन बहुत पथरीली थी। महर्षि ने दूसरी जगह से अच्छी नर्म मिट्टी लाकर यहाँ पर बहुत सुन्दर बाग बनाया। गुलाब, जूही, मौलसिरी, बेला, माधवी, मालती, गन्धराज वगैरह कितने खुशबूदार फूलों के पेड़ उन्होंने लगाये। आम, जामुन, कटहल, अमरूद वगैरह फलों के पेड़ भी लगाए गए। साल, महुवा, देवदार वगैरह बड़े-बड़े छायेदार पेड़ भी वहाँ देखते-देखते बड़े हो गये। फूल खिले; खुशबू चारों ओर फैली; वीरान मैदान में हरियाली छा गई। चिड़ियों के चहचहाने से वातावरण गूँज उठा। शान्तिनिकेतन सचमुच में एक सुन्दर आश्रम बन गया।

रवीन्द्रनाथ के शान्तिनिकेतन में उनके पिता महर्षि का निशान—छतिवन के नीचे संगमर्मर की यह पूजा वेदी आज तक वैसे ही है। इसी वेदी पर बैठकर महर्षि दिनों, महीनों ईश्वर की पूजा व ध्यान करते थे। इसी वेदी पर ये शब्द लिखे हुए हैं—

"वही है
मेरे प्राण का आराम,

मन का आनन्द,
आत्मा की शान्ति।"

महर्षि ने बहुत रुपये खर्च करके यहाँ पर एक मन्दिर बनाया था। इसका फर्श था संगमर्मर का और रंगीन शीशे के टुकड़ों से इसको दीवारें बनी थीं। बहुत दनों तक यह मन्दिर आसपास, के गाँव में "भुवनडांगा का काँचबंगला" के नाम से मशहूर था दीवार में बहुत से दरवाजे थे। खोल देने से कमरा बारहदरी की तरह बन जाता था। आश्रम में जो चाहे आकर रह सकते थे। वहाँ मेहमानों के खाने पीने के लिए, रोजमर्रा की पूजा के लिए और त्योहार मनाने के लिए महर्षि ने अलग रुपये मुकर्रर किये थे। उसी रुपये से आश्रम का खर्च चलता था। यहाँ पर महर्षि ने एक पुस्तकालय व विद्यालय भी खोलना चाहा। आगे चलकर रवीन्द्रनाथ ने पिता की इच्छा पूरी की थी।

१६०१ ई० में रवीन्द्रनाथ ने पिता की अनुमति से शान्ति-निकेतन में 'ब्रह्मचर्याश्रम' नाम का विद्यालय खोला। पुराने जमाने में ऋषियों के आश्रम में ब्रह्मचर्य पालन कर जैसे लड़के पढ़ते थे यह विद्यालय भी वैसा ही था। रवीन्द्रनाथ जमीन्दारी की देखभाल छोड़-कर स्त्री व बाल-बच्चों के साथ यहीं आकर रहने लगे।

रवीन्द्रनाथ स्वयं बालकों को पढ़ाते थे। उनका लड़का रथीन्द्रनाथ ने भी इस विद्यालय में ही पढ़ा। उनके साथ जगदानन्द राय, लारेंस नाम के एक अँग्रेज, रेवाचाँद नाम के एक सिन्धी ईसाई व पण्डित शिवधन विद्यार्णव भी इस विद्यालय के लड़कों को पढ़ाते थे। शुरू-शुरू में यहाँ रवीन्द्रनाथ को रुपये की कमी के कारण बहुत कष्ट उठाना पड़ा। जमीन्दारी से उनको जो रुपये मिलते थे उससे वह कारबार का ऋण चुकाते थे। विद्यालय के खर्च निभाने के लिये उन्होंने पुरी का मकान व अपनी कीमती लाइब्रेरी बेच दी।



उनकी पत्नी मृणालिनी देवी ने पति का कष्ट देखकर अपने सब गहने उनको दे दिए कि उन्हें बेच कर खर्च चलाया जाय। वह स्वयं आश्रम के बच्चों के लिये खाना बनाती थी। विद्यालय के लड़कों के लिये वह सचमुच माँ थीं। आश्रम के काम में वह दिल से पति का साथ देती थीं। कलकत्ते के ऐश व आराम की गृहस्थी छोड़कर शान्तिनिकेतन में रहना उनको पसंद नहीं था। उस समय शान्ति-निकेतन में रवीन्द्रनाथ व उनके परिवार के रहने के लिये अलग कोई मकान भी नहीं था। मेहमानों के रहने के लिये जो पक्का दोमंजिला घर था उसी की दूसरी मंजिल पर रवीन्द्रनाथ अपने परिवार के साथ रहते थे। वहाँ से रसोईघर दूर था इसीलिये मृणालिनी देवी बरामदे के कोने मे चूल्हा बना कर वहाँ खाना बनाया करती थीं। उनको खाना बनाने का बहुत शौक था। रोज वह तरह-तरह की मिठाइयाँ बनाती थीं और रथी अपने दोस्तों के साथ आकर जाली की आलमारी से निकाल कर उन्हें खत्म करते थे। रवीन्द्रनाथ भी रोजाना कुछ न कुछ नई मिठाई या तरकारी बनाने की फरमाइश करते थे। मृणालिनी देवी भी खुशी से बनाती थीं। लेकिन कई महीने बाद उनकी तन्दुरुस्ती बिगड़ गई। रवीन्द्रनाथ इलाज के लिये उनको कलकत्ते ले आए। तरह-तरह का इलाज हुआ—लेकिन सब व्यर्थ हुआ। मृणालिनी देवी का देहान्त हो गया। महीने भर वह बीमार थीं। रवीन्द्रनाथ ने कोई "नर्स" नहीं रखा—खुद अपने हाथ से दिन-रात उनकी सेवा करते थे। विद्यालय के काम में जिन्होंने सब से ज्यादा साथ दिया था वही रवीन्द्रनाथ को अकेले छोड़कर चली गईं।

मृणालिनी देवी की मृत्यु के साथ रवीन्द्रनाथ के ऊपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। कई महीने के भीतर उनकी मझली लड़की रेणुका भी सख्त बीमार पड़ गई। उसके इलाज के लिये रवीन्द्रनाथ को अलमोड़ा जाना पड़ा। इधर शान्तिनिकेतन का काम-काज देखना



उधर बोमार लड़की की देखभाल करना—दौड़-धूप करते हुए रवीन्द्रनाथ परेशान हो गये थे । अलमोड़ा से लड़की को कलकत्ता ले आए और उसके रहने के लिए छत पर शीशे का एक कमरा बना दिया । स्नेहमय पिता ने बहुत कोशिश की, बहुत पैसे भी खर्च किए पर लड़की अच्छी नहीं हुई । माँ की मृत्यु के नौ महीने बाद वह भी बाप का दिल तोड़कर माँ के पास चली गई ।

दुख-शोक-बीमारी में रवीन्द्रनाथ कभी अधीर नहीं होते थे । वह जानते थे कि जब दुनिया में इन्सान ने जन्म लिया तब उसे मरना भी होगा । जिसका जब जाने का वक्त आवेगा, वह चला जाएगा : कोई उसे रोक नहीं सकेगा । स्त्री की मृत्यु के समय उनका सबसे छोटा लड़का शमीन्द्रनाथ आठ साल का बालक था । माँ से बिछुड़े हुए इस बच्चे को बहलाने के लिये रवीन्द्रनाथ ने बहुत सुन्दर बच्चों की कवितायें लिखी थीं जो उनकी "शिशु" नाम की पुस्तक में छापी गई थीं । मृणालिनी देवी की मृत्यु के तीन साल बाद यह बालक भी स्वर्ग चला गया । कहा जाता है कि अगर जिन्दा रहता तो यह बालक बाप की तरह ही मशहूर कवि होता । लड़का बहुत ही बुद्धिमान था । बाप की असाधारण प्रतिभा की झलक उसमें थी । इसकी मृत्यु से रवीन्द्रनाथ के दिल में कितनी ही चोट पहुँची हो—बाहर से वह शान्त थे और शान्त होकर अपना काम-काज करते थे । काम में मग्न होकर वह दुख भूल जाने की कोशिश करते थे ।

पहले इस विद्यालय में कुछ थोड़े से लड़के थे । धीरे-धीरे उनकी संख्या बढ़ने लगी । फिर दस-पन्द्रह साल के भीतर वहाँ देश-परदेश से बच्चे पढ़ने आते थे । शान्तिनिकेतन का मैदान छोटी-छोटी कुटियों से भर गया । इन कुटियों में विद्यार्थी लड़के रहते थे । विद्यालय बनने के कुछ दिन बाद रवीन्द्रनाथ के पिता महर्षि ने कहा था—"मैं देख रहा हूँ कि सारा मैदान लड़कों से भर गया है ।"

इस विद्यालय के बारे में कोई अगर निराशा जाहिर करता तो महर्षि हँसकर कहते थे—"नहीं, इसका भविष्य उज्वल है। यहाँ पर मैंने भगवान की प्रतिष्ठा की है।" उनकी बात सच निकली।



इस विद्यालय का तौर-तरीका दूसरे विद्यालयों से फर्क था। यहाँ पर न मास्टरों की डाँट-डपट थी और न मारना-पीटना हो था। बच्चे यहाँ निडर होकर पढ़ने जाते थे, खुशी-खुशी, हँस-खेल कर सबक याद करते थे। पढ़ाई खत्म हो जाने पर मैदान में खेल-कूद करते थे। मास्टर लोग भी दिल खोलकर बच्चों के साथ मिलते-जुलते थे; उनके खेल में खुशी से हिस्सा लेते थे।

पुराने जमाने के तपोवन के आदर्श पर रवीन्द्रनाथ ने इस विद्यालय को बनाया था। यहाँ के बच्चे शुरू-शुरू में ब्रह्मचर्य का पालन करते थे। उनका रहन-सहन बिल्कुल तपोवन के बच्चों का-सा था। वे बहुत सबेरे सोकर उठते थे। मुख-हाथ धोकर अपना कमरा-बिस्तर साफ करते थे। फिर खुले मैदान में कसरत कर नहाते थे। नहाने के बाद पूजा व स्तोत्र पाठ करना जरूरी था। वे जूते या छत्री इस्तेमाल नहीं करते थे। खाना भी बहुत सादा खाते थे। वे सब शाकाहारी थे। अपना सब काम अपने हाथ से करते थे। सबको नियम से रहना पड़ता था। मास्टर के साथ बच्चों का बर्ताव बहुत नम्र होता था। वे मास्टर की बात मानते थे। पेड़ के नीचे अध्यापक को प्रणाम कर अपने-अपने आसन पर बैठकर वे पढ़ते थे। ये सब नियम अब नहीं हैं—फिर भी शान्तिनिकेतन के शुरू का वातावरण आज वहाँ पर दिखाई देता है। आज भी वहाँ ज्यादातर पेड़ों के नीचे पढ़ाई होती है।

अब शान्तिनिकेतन में 'विश्वभारती' के नाम से एक बड़ा भारी विश्वविद्यालय है जिसका नाता सारी दुनिया से है। इस 'विश्वभारती' में तरह-तरह के विभाग हैं। पाठ भवन (विद्यालय)



शिक्षा भवन (कालेज), विद्या भवन (गवेषणा विभाग), संगीत भवन, कला भवन वगैरह यहाँ के विभाग हैं। तरह-तरह की भाषा सिखाने के अलावा यहाँ संगीत, चित्रकला, नृत्य वगैरह बहुत-सी चीजें सिखाई जाती हैं। इसीलिये रवीन्द्रनाथ की विश्वभारती अपने ढंग का एक निराला प्रतिष्ठान है।

शान्तिनिकेतन में 'हेडमास्टर' या कोई अध्यक्ष नहीं थे। सभी अध्यापक बराबर थे। लड़के निडर होकर अध्यापक से बातचीत करते थे। सब बातों में लड़कों को आजादी थी, साथ ही उन लोगों को विद्यालय के नियमों को भी मानना पड़ता था। लड़के अपने में से एक 'नायक' चुन लेते थे। वह अपने दल के लड़कों पर निगरानी रखता था। कोई लड़का अगर नियम तोड़ता था या और कोई शरारत करता था तो 'नायक' उसका विचार कर उसे दंड देता था। उसका कहना सबको मानना पड़ता था।

यहाँ पर ज्यादातर खुले मैदान में, घास के ऊपर पेड़ों की छाँह में पढ़ाई होती है। मेज कुर्सी का यहाँ कोई खास हंगामा नहीं है। इम्तहान के समय भी लड़के आजादी से जहाँ मन चाहा वहीं बैठकर उत्तर लिखते थे। अध्यापक लोग कभी बच्चों पर शक नहीं करते थे। और लड़के भी कभी ऐसा कोई काम नहीं करते थे ताकि उन पर शक किया जाय। ऐसा सुन्दर वातावरण था इस आश्रम में।

पढ़ाई के अलावा आश्रम के लड़कों को और भी तरह-तरह का काम करना पड़ता था। आश्रम के आस-पास जो गाँव थे लड़के वहाँ के रहने वालों के साथ मिलते जुलते थे, उनको लिखना-पढ़ना सिखाते थे। बीमारी में उनको दवा देते थे, सेवा करते थे। दुख के समय उनकी मदद करते थे। इसी तरह लड़के गाँव वालों की सेवा करते थे। रवीन्द्रनाथ का यही ध्यान था कि पढ़-लिखकर लड़के केवल विद्वान नहीं बल्कि सच्चा इन्सान बनें।



लड़कियों के लिये भी शान्तिनिकेतन में इन्तजाम था। लिखने-पढ़ने के अलावा लड़कियाँ तरह-तरह के गृहशिल्प भी सोखती थीं। जैसे रंगोन तस्वीर खींचना, आलपना देना, मिट्टी से खिलौने व मूर्ति बनाना, दीवार पर तस्वीर खींचना वगैरह। साथ-साथ वे सिलाई-कढ़ाई, खाना बनाना, मरीज को सेवा करना, घर-द्वार सजाना, मेहमानों की देखभाल करना वगैरह भी सीखती थीं। लड़कों के साथ पेड़ की छाया में या खुले मैदान में बैठकर लड़कियाँ भी पढ़ती थीं। केवल उनके रहने की जगह अलग थी। वे अलग कसरत भी करती थीं। लड़कियों को अलग रहने के लिये जो मकान था रवीन्द्रनाथ ने उसका नाम दिया था 'श्रीभवन' यानी लक्ष्मी का घर। लड़कियाँ लक्ष्मी की प्रतीक हैं। रवीन्द्रनाथ चाहते थे कि लड़कियों का चालचलन बहुत सुन्दर हो। घर में धन भी रहे घर कभी श्रोहीन न होने पावे।

शान्तिनिकेतन आश्रम के आसपास के गाँव के किसान लड़कों को लेकर रवीन्द्रनाथ ने एक नए ढंग का विद्यालय खोला था। किसान लड़के छोटे-छोटे खेतों में हल चलाकर खेती करते थे। फिर वे कारखाने में कपड़े बनाना और दूसरा हाथ का काम सीखते थे। शाम को उन लोगों की पढ़ाई के लिये एक नैश-विद्यालय भी था जहाँ ये लड़के लिखना-पढ़ना सीखते थे।

इसी कुटीर शिल्प के उद्योग को बढ़ाकर रवीन्द्रनाथ ने १९२२ ई० में सुरुल गाँव में कृषि व गृहशिल्प की शिक्षा के लिये 'श्रीनिकेतन' नाम का एक प्रतिष्ठान खोला। श्रीनिकेतन शान्तिनिकेतन का ही एक हिस्सा है। श्रीनिकेतन में लड़के खेती का काम, बागवानी, कपड़े बनाना, लकड़ी का काम, गोपालन वगैरह काम सीखते हैं। रवीन्द्रनाथ ने अपने पुत्र रथीन्द्रनाथ को कृषि विद्या



सीखने के लिये अमरीका भेजा था। बाद में रवीन्द्रनाथ श्रीनिकेतन का पूरा जिम्मा रथीन्द्रनाथ के हाथ में सौंपकर निश्चिन्त हुए।

रवीन्द्रनाथ थे शान्तिनिकेतन का प्राण। उनके व्यक्तित्व से आश्रम सराबोर रहता था। अपने हाथ से बनाए हुए छोटे से विद्यालय से शान्तिनिकेतन विद्यालय एक विश्वमहाविद्यालय बन गया था। इसके पीछे था रवीन्द्रनाथ के जीवन भर का प्रयत्न व साधना। मरुभूमि के बीच उन्होंने सुन्दर बाग बनाया था। यहीं पर रहना उनको पसन्द था। जब कभी काम के लिये कलकत्ता या और कहीं उनको जाना पड़ता, उनका मन शान्तिनिकेतन के लिये व्याकुल रहता था। जितनी जल्दी हो सके वह वहाँ लौट आते थे। यहाँ उनका सच्चा घर था—आश्रम के रहने वाले ही उनके आत्मीय थे। उनके सुख-दुख के साथ उन्होंने अपना सुख-दुख मिला दिया था।

रवीन्द्रनाथ हर ऋतु में आश्रम में उत्सव का आयोजन करते थे। वर्षा, शरत् व वसन्त में वह आश्रम के लोगों को लेकर त्योहार मनाते थे। गाना-नाचना व नाटक आदि खेलकर वह सबके साथ आनन्द में मस्त हो जाते थे। वह खुद ही लड़के-लड़कियों को सिखाते थे—नाटक में हिस्सा लेते थे। आगे चलकर ऐसा भी हुआ कि रवीन्द्रनाथ शान्तिनिकेतन के लड़के-लड़कियों को लेकर दूसरे शहर या देश में नाटक दिखाने जाते थे। बुढ़ापे में भी कई बार ऐसे उनको बाहर जाना पड़ा। बुढ़ापे के कारण जब नाटक में खुद हिस्सा नहीं ले पाते थे, रवीन्द्रनाथ का नियम था कि वह रंगमंच के एक तरफ बराबर बैठे रहते थे। उनके रहने से लोगों पर और भी असर पड़ता था।

शान्तिनिकेतन की विश्वभारती अब केवल भारत की ही नहीं—सारी दुनिया की अपनी चीज है। दूर-दूर देश से राजा-

महाराजा, बड़े-बड़े आदमी शान्तिनिकेतन में रवीन्द्रनाथ की विश्व-भारती देखने आते थे—आज भी आते हैं। यह विद्यालय दुनिया भर के विद्वानों का एक मिलनतीर्थ है।



१६०५ ई० में कलकत्ते में रवीन्द्रनाथ के पिता महर्षि का देहान्त हो गया। मरने से पहले रवीन्द्रनाथ ने ही उनके कान के पास मुख ले जाकर उपनिषद का मन्त्र पढ़ा—"मुझे असत्य से सत्य की ओर अन्धकार से ज्योति की ओर मृत्यु से अमृत की ओर ले चलो।" मन्त्र पाठ सुनते-सुनते सदा के लिये महर्षि की आँखें बंद हो गईं। शान्तिनिकेतन आश्रम के महान प्रतिष्ठाता स्वर्ग चले गए। ●

## ● स्वदेशी आंदोलन

इसी समय १६०५ ई० में उस समय के बड़े लाट साहब ने बंगाल प्रान्त को दो टुकड़े में विभाजित कर दिया। इस पर प्रान्त भर में अंग्रेजी सरकार के खिलाफ बहुत जोर आन्दोलन शुरू हो गया। सारे प्रान्त ने विलायती चीजों के वर्जन करने के लिये निश्चय किया। चारों ओर सभा होने लगी। गर्म व जोशीले भाषण दिए जाने लगे। रवीन्द्रनाथ इस आंदोलन के अगुआ बन गए। लेख



स्वदेशी आन्दोलन में



लिखकर, भाषण देकर उन्होंने अंग्रेज सरकार के खिलाफ बहुत जोश पैदा किया।

जिस तारीख को अंग्रेजी सरकार ने 'बंगभंग' जारी किया उस दिन रवीन्द्रनाथ ने सारे बंगाल प्रान्त में "राखीबन्धन" की पुण्य तिथि चालू करवाई थी। उस दिन सबेरे हजारों बंगालियों ने गंगाजी में नहाकर 'भाईचारा' का बर्ताव पक्का करने के लिये एक दूसरे के हाथ में राखी बाँधी। रवीन्द्रनाथ ने स्वयं नंगे पैर कलकत्ते के रास्ते व गलियों में घूम-घूमकर सबके हाथ में राखी बाँधी। जुलूस निकालकर लोग रवीन्द्रनाथ के लिखे हुए स्वदेशी गीत गाकर घर-घर घूमते रहे। वह त्योहार नहीं बल्कि बंगालियों के लिये शोक मनाने का दिन था। उस दिन किसी भी बंगाली के घर चूल्हा नहीं जलाया गया; दूकान-बाजार सब बन्द थे।

इस स्वदेशी आन्दोलन को बन्द करने के लिये सरकार की तरफ से बहुत सख्ती की गई थी। खासकर विद्यार्थी नौजवान इसका शिकार बने। उस समय "वन्देमातरम्" का नारा मुख से निकालने पर सख्त सजा दी जाती थी। लड़के भी लाल मुख वाले अंग्रेज को देखते ही "वन्देमातरम" कहकर चिल्ला उठते थे, मार खाते थे, कैद किये जाते थे, जुर्माना देते थे फिर भी उनका जोश कम नहीं होता था। सरकारी स्कूलों से निकाले हुए, स्वदेशी आन्दोलन में भाग लेने वाले इन लड़कों के लिये बहुत से जातीय विद्यालय खुल गये थे। चन्दे से इन विद्यालयों का खर्च पूरा होता था। चन्दा इकट्ठा करने में भी रवीन्द्रनाथ ने अधिक मेहनत की थी।



## ● राजनीति से अलग हो जाना

बंगाल प्रान्त में स्वदेशी आन्दोलन बहुत जोर से चल रहा था। 'नर्म' व 'गर्म' दो दलों में यह आन्दोलन बँट गया। रवीन्द्रनाथ को यह दलबन्दी पसन्द नहीं थी। उन्होंने इसकी बहुत निन्दा भी की। जब बहुत कोशिश करने पर भी यह गन्दी दलबन्दी, आपस की फूट दूर नहीं हुई तब रवीन्द्रनाथ बहुत दुखी होकर आन्दोलन से अलग हो गए व शान्तिनिकेतन चले गए। एकाएक उनके राजनीति से इस तरह अलग हो जाने से लोग तरह-तरह की बातें कहने लगे—रवीन्द्रनाथ ने परवाह नहीं की। वह चुपचाप अपने लिखने-पढ़ने मे जुट गये। आगे चलकर कभी-कभी लोगों के कहने से उन्होंने देश-सेवा मे भाग लिया। जैसे १६०८ ई० में पाबना शहर में जब बंगाल प्रान्त की कांग्रेस कमेटी की सभा हुई थी तब रवीन्द्रनाथ को उसका सभापति होना पड़ा था। उस सभा में उन्होंने अपने भाषण में संगठन का काम, गाँवों की उन्नति, हिन्दू-मुसलमान एकता वगैरह पर ही जोर दिया था।

इसी समय नौजवान अँग्रेज अफसरों के ऊपर बम गिरने लगे। कलकत्ते में एक जगह बम का कारखाना भी पुलिस को मिल गया। साथ ही सरकार की सख्ती शुरू हो गई। रवीन्द्रनाथ ने जोरदार लेखों से सरकार की कार्यवाही की बुराई की। देश के शहीदों की हिम्मत की तारीफ की। एक ओर जैसे उन्होंने सरकार की बुराई की—दूसरी ओर हिन्दुस्तानियों को सच्चा देशभक्त होने के लिए उन्होंने तरह-तरह की सलाह दी। महात्मा गाँधी का सत्याग्रह आन्दोलन शुरू होने से पहले ही अहिंसा सत्याग्रह कैसा होना चाहिए इसका बयान कर रवीन्द्रनाथ ने 'प्रायश्चित्त' नाम का एक नाटक लिखा था। उसी नाटक में उन्होंने 'धनंजय बैरागी' नाम के एक



सन्यासी का चरित्र बयान किया था जो गाँधीजी से मिलता-जुलता है।

स्वदेशी आन्दोलन में भाग लेने के लिये तथा अँग्रेजी सरकार की बुराई करने के लिये सरकार के मन में रवीन्द्रनाथ के ऊपर गुस्सा था। १६१२ ई० में पूर्वी बंगाल व आसाम सरकार की ओर से नोटिस जारी की गई कि सरकारी दफ्तरों में काम करने वाले लोगों के बच्चे शान्तिनिकेतन में हर्गिज पढ़ने के लिये भेजे न जायें। लोग डर के मारे बच्चों को शान्तिनिकेतन से हटाने लगे। रवीन्द्रनाथ को बहुत दुख हुआ। बहुत से लड़कों के विद्यालय छोड़ देने से बहुत नुकसान हुआ। लेकिन रवीन्द्रनाथ ने शान्त होकर इस चोट को सहन किया। वह जानते थे कि समय पर सब ठीक हो जाएगा। इसी समय माइरन फेल्प्स नाम के एक अमरीकी सज्जन निकेतन में घूमने आए थे। उन्होंने आश्रम की, विद्यालय के पढ़ाने के ढंग की व वहाँ के रहन-सहन की बहुत-बहुत तारीफ की थी।

## गीताञ्जलि ●

१६१२ ई० में रवीन्द्रनाथ फिर विलायत गए। अब की बार वहाँ पर 'रदेनस्टाइन' नाम के मशहूर आदमी से रवीन्द्रनाथ का परिचय हुआ। इससे पहले १६०६ ई० में रवीन्द्रनाथ ने बहुत-सी सुन्दर गीत व कविताएँ लिखी थीं जो 'गीतांजलि' पुस्तक में छापी गई थीं। रवीन्द्रनाथ ने अपनी बहुत-सी कविताओं का अँगेजी अनुवाद खुद किया था। विलायत के बड़े-बड़े विद्वानों ने उन कविताओं को पढ़कर उनकी बहुत तारीफ की। उन लोगों ने ऐसी कविताएँ कभी नहीं पढ़ी थीं। तभी ये उनको बहुत पसन्द आईं। अँग्रेज कवि येट्स तो इन कविताओं को पढ़कर मोहित व गद्गद् हो गए थे। लंदन शहर की इन्डिया सोसाइटी ने रवीन्द्रनाथ की अँग्रेजी गीतांजलि



छापी। कवि येट्स साहब ने उसको एक बहुत सुन्दर भूमिका लिखी थी। रदेनस्टाइन ने रवीन्द्रनाथ की एक तस्वीर खींच दी थी। अँग्रेजी गीतांजलि ने विलायत में हलचल मचा दी थी। सभी के मुख में इस किताब का नाम था। इसके बाद विलायत में रवीन्द्रनाथ की और कई किताबें अँग्रेजी में निकलीं। लेकिन वे 'गीतांजलि' के बराबर की नहीं थीं।

इसके बाद अमरीका होकर रवीन्द्रनाथ हिन्दुस्तान लौट आए।

लौट आने के बाद १९१३ ई० में रवीन्द्रनाथ को 'गीतांजलि' के लिये नोबेल पुरस्कार मिला। यूरोप के स्वीडेन देश में अलफ्रेड नोबेल नाम के एक करोड़पति थे। उन्होंने अपने सारे रुपये विद्वानों को पुरस्कार देने के लिये रख छोड़े थे। हर साल यह पुरस्कार दिया जाता था। इससे पहले यूरोप के लोगों को ही यह पुरस्कार मिला था। एशिया तथा हिन्दुस्तान में पहले पहल रवीन्द्रनाथ को ही यह पुरस्कार मिला था। सारा देश खुशी से नाच उठा। कोने-कोने से हिन्दुस्तानियों ने उनको बधाई दी। सभायें की गयीं। भाषण दिए गये। रवीन्द्रनाथ को लेकर देश भर में चहलपहल मच गई। रवीन्द्रनाथ के कारण दुनिया में हिन्दुस्तानियों का सिर ऊँचा हुआ। इस पुरस्कार से रवीन्द्रनाथ को एक लाख बीस हजार रुपये मिले थे। उन्होंने खुद एक कौड़ी भी नहीं ली। पूरी रकम शान्तिनिकेतन को दे दी। यह भी रवीन्द्रनाथ के लिये बहुत बड़ी बात थी।

उसी साल लाट साहब की कोठी के एक शानदार दरबार में लाट साहब ने खुद अपने हाथ से रवीन्द्रनाथ को नोबेल पुरस्कार व तमगा दिया था। देश-परदेश में रवीन्द्रनाथ का नाम मशहूर हो गया।



## गांधी जी के साथ परिचय

दक्खिनी अफ्रीका में गान्धी जी ने सत्याग्रह आन्दोलन शुरू किया था। शान्तिनिकेतन में रहने वाले रवीन्द्रनाथ के दो मित्र ऐण्ड्रूज व प्यारसन साहब गान्धी जी के पास अफ्रीका चले गए। वहाँ जाकर इन दोनों साहबों ने भी सत्याग्रह में भाग लिया। रवीन्द्रनाथ ने गान्धी जी को शान्तिनिकेतन में आने की दावत भेजी थी। गान्धी जी के कई साथी १६१५ ई० में शान्तिनिकेतन आए थे। गान्धी जी व उनके सथियों ने अफ्रीका में अपने देशवासियों का दुख दूर करने के लिए बहुत कष्ट उठाया था। शान्तिनिकेतन आश्रम के लड़कों को यह बात मालूम हो गई। उस साल पूर्वी बंगाल के किसानों में अकाल पड़ा था। शान्तिनिकेतन के लड़कों ने रुपये इकट्ठा करके किसानों की मदद की थी। इसलिये लड़कों ने चीनी खाना बन्द कर दिया था। चीनी खरीदने के रुपये किसानों को भेज दिए गये थे।

उसी साल गान्धीजी विलायत गए थे। लौटते समय वह बम्बई होकर शान्तिनिकेतन आए। रवीन्द्रनाथ उस समय शान्तिनिकेतन में नहीं थे। उनके लौटने से पहले ही गान्धीजी पूना चले गए क्योंकि गोखले का देहान्त हो गया था। महीने भर बाद गान्धीजी फिर शान्तिनिकेतन आए। रवीन्द्रनाथ ने उनका स्वागत किया। गान्धीजी के कहने पर आश्रम के लड़के अपना सब काम अपने हाथ से करने लगे। कोई नौकर-चाकर नहीं रहे। कुछ दिनों तक यह नियम चालू रहा फिर बन्द कर दिया गया। मार्च महीने में गान्धीजी शान्तिनिकेतन आए थे। अभी हर साल १० मार्च को आश्रम में 'गान्धी-दिवस' मनाया जाता है। उस दिन लड़के व अध्यापक लोग अपने हाथ से सब काम करते हैं। नौकरों की छुट्टी रहती है।

कुछ दिन आश्रम में रहकर गान्धीजी अपने साथियों के साथ हरिद्वार चले गए।



## सरकार से सम्मान

अब तक रवीन्द्रनाथ का नाम बहुत मशहूर हो गया था। बंगाल के लाट साहब भी शान्तिनिकेतन गए और रवीन्द्रनाथ के मेहमान होकर कुछ दिन वहाँ रहे।

उस समय यह कायदा था कि हर साल इंगलैंड के राजा की सालगिरह पर सरकार बहुतों को पदवी देती थी। हिन्दुस्तान के राजा, महाराजा, नवाब, राय बहादुर, खान बहादुर वगैरह पदवियाँ दी ज़ाती थीं। सरकार ने उसी साल रवीन्द्रनाथ को भी एक पदवी दी। वह हिन्दुस्तानी पदवी नहीं थी। विलायत के बड़े-बड़े खानदानी अमीरों की तरह वह 'नाइट' बनाये गए और 'सर रवीन्द्रनाथ' के नाम से पुकारे जाने लगे। एक हिन्दुस्तानी के लिये यह बड़ा भारी सम्मान था।

## जापान में

१९१६ ई० में रवीन्द्रनाथ ऐण्ड्रूज, प्यारसन वगैरह को लेकर जापान रवाना हुए। रास्ते में रंगून के लोगों ने उनका शानदार स्वागत किया। रंगून से जहाज सिंगापुर होता हुआ हाँगकाँग पहुँचा। वहाँ पर जहाज के कप्तान ने रवीन्द्रनाथ से आकर कहा कि—"आगे संगहाई जाना असम्भव है।" जापान के लोग रवीन्द्रनाथ को देखने के लिये अधीर हो गए।

तब जहाज बीच में और कहीं न रुककर सीधा जापान की ओर चलने लगा। फिर जहाज कोबे बन्दरगाह पर पहुँचा। वहाँ पर



जापान के लोगों ने रवीन्द्रनाथ की अगवानी की। जापानी रईस ओकुमा ने जापानी भाषा में भाषण दिया। रवीन्द्रनाथ ने बंगला भाषा में उसका जवाब दिया। वहाँ के मशहूर चित्रकार 'हरा' के यहाँ रवीन्दनाथ कई दिन मेहमान रहे। उस समय जापानी सरकार चीन देश पर कब्जा करना चाहती थी। रवीन्द्रनाथ को यह बात पसन्द नहीं आई। जापान में बैठकर ही उन्होंने जापानी सरकार का निन्दा की थी। इससे जापानी सरकार रवीन्द्रनाथ के ऊपर नाराज हो गई थी। लेकिन जापान में जो समझदार लोग थे, उन लोगों ने रवीन्द्रनाथ की सराहना की। इसी तरह कवि रवीन्द्रनाथ चारों ओर घूमते रहे।

## अँग्रेज सरकार का विरोध ●

उस समय अँग्रेज व जर्मनी में लड़ाई चल रही थी। यहाँ हिन्दुस्तान में भी उसका असर दिखाई दे रहा था। सरकार लोगों तथा अखबारों पर बहुत सख्ती करने लगी। रवीन्द्रनाथ यह सह नही सके। वह लेख लिखकर, भाषण देकर इसका विरोध करने लगे। वह था १९१७ का साल। सरकार ने एनी बेसेंट को कैद में डाल दिया। इसी साल कलकत्ते में कांग्रेस की सभा हुई थी।

रवीन्द्रनाथ ने इस समय अमरीका जाने की तैयारी की थी। लेकिन अँग्रेजी सरकार ने उसमें रोड़ा डाल दिया। रवीन्द्रनाथ शान्तिनिकेतन चले गए और अपना काम करने लगे।

अँग्रेज सरकार कड़े हाथों से शासन कर रही थी। गान्धीजी ने उस समय अपना आन्दोलन शुरू कर दिया था, देश भर में चारों ओर अशान्ति फैली हुई थी। जनता सरकार के खिलाफ थी। सरकार भी



जनता को दबाने के लिए नए-नए कानून बनाने लगी। देश भर में बगावत फैलने लगी।

उसी समय १९१९ ई० के १३ अप्रैल को अमृतसर के जलियानवाला बाग में एक सभा होने वाली थी। सरकार ने सभा करने को मना किया था। बहुत से लोगों को सरकारी हुक्म के बारे में पता ही नहीं था। करीब बीस हजार आदमी उस बाग में जमा हुए थे। सभा का काम चल रहा था। एकाएक वहाँ फौज आ गई। जनता से कहा गया कि सभा से चली जाय। लेकिन आने-जाने का एक ही रास्ता था। वह भी बहुत तंग था इतने हजारों आदमी निकलें तो कैसे निकलें। फौजी अफसर ने जनता पर गोली चलाने का हुक्म दे दिया। मिनटों में हजारों आदमी मर गए या घायल हो गए। न किसी ने लाश उठाई, न घायलों की सेवा की। चारों ओर कुहराम मच गया। निहत्थे बेकसूर लोगों पर गोली चलाने की खबर देश भर में फैल गई। रवीन्द्रनाथ यह खबर सुनकर दुख और शोक से पागल हो गए। वह रात भर सो नहीं सके, पागलों की तरह चक्कर काटते रहे। फिर सोच लिया कि सरकार का किसी तरह विरोध करना चाहिये। सरकार ने उनको 'सर' की पदवी देकर 'नाइट' बनाया था। सरकार की दी हुई उस पदवी पर रवीन्द्रनाथ को नफरत आ गई। उन्होंने फौरन बड़े लाट को एक पत्र लिखा और अपनी पदवी लौटा दी। उन्होंने पत्र में लिखा था—"मैं अपने गरीब भाइयों के पास गरीब होकर खड़ा होना चाहता हूँ। जिस सरकार ने मेरे बेकसूर भाइयों पर ऐसा जुल्म किया उसका दिया हुआ कोई इनाम मैं ले नहीं सकता। इसीलिये मैं यह पदवी भी नहीं रखूँगा—सरकार इसे वापस ले ले।



## यूरोप व अमरीका सफर

रवीन्द्रनाथ पहले इंगलैंड गये थे। वहाँ से वह अमरीका गए। अमरीका से लौटने पर यूरोप के दूसरे देशों से उनका बुलावा आया। लोग उनसे मिलने के लिये बहुत इच्छुक थे। हर जगह पर उनका बहुत आवभगत किया गया था। किसी देश के किसी राजा-महाराजा को भी इतना सम्मान नहीं मिला जितना रवीन्द्रनाथ को मिला था।

रवीन्द्रनाथ डेनमार्क के कोपेनहेगेन शहर में गए। हजारों आदमी उनको देखने के लिये इकट्ठा हुए थे। वहाँ के विश्वविद्यालय में उन्होंने भाषण दिया। भाषण खत्म होने के बाद लड़कों ने उन्हें घेर लिया। शहर के और लोग भी साथ थे। फिर लड़कों ने रवीन्द्रनाथ को बीच में रखकर, हाथ में मशाल लेकर एक जुलूस निकाला था। वह शोभा देखने लायक थी।

स्वीडेन में भी रवीन्द्रनाथ का बहुत स्वागत हुआ। वहाँ के लोगों ने भी रवीन्द्रनाथ को लेकर एक जुलूस निकाला। वहाँ के सब से बड़े पादरी साहब जुलूस के आगे चल रहे थे। इतना सम्मान परदेशियों ने रवीन्द्रनाथ का किया था।

रवीन्द्रनाथ जर्मनी भी गए थे। वहाँ के विश्वविद्यालय में रवीन्द्रनाथ का भाषण हुआ। इतनी भीड़ हुई कि कमरे से बाहर बरामदा और सीढ़ियाँ भी भर गईं। हजारों आदमी बाहर सड़क पर खड़े थे। दरवाजे व सीढ़ी पर इतने आदमी थे कि रवीन्द्रनाथ के लिए भी भीतर जाना मुश्किल था। कोई हटना नहीं चाहता था। लोग भारत के मशहूर कवि को देखने व उनका भाषण सुनने आये थे। और रवीन्द्रनाथ का चेहरा भी देखने लायक था। यूरोप के लोग सोचते थे या तो रवीन्द्रनाथ कोई देवदूत होंगे या स्वयं यीशु खृष्ट होंगे। उस दिन जब सभा होना ही मुश्किल हो गया तब एक अध्या-

पक विश्वविद्यालय के लड़कों के साथ कमरे से बाहर चले गये ताकि दूसरों के लिए जगह हो। लड़के निराश हो गए थे। लेकिन रवीन्द्र-नाथ ने उन लोगों से कहा—'तुम लोग दुखी मत होओ। कल मैं अलग से तुम लोगों से बातचीत करूँगा।" लड़के खुश हो गए। चौदह-पन्द्रह हजार आदमी उस दिन वहाँ इकट्ठे हुए थे।



जर्मनी में रवीन्द्रनाथ की किताबों का बड़ा आदर है। वहाँ एक बार तीन हफ्ते के भीतर रवीन्द्रनाथ की एक किताब की पचास हजार कापियाँ बिक गई थीं।

फ्रांस में भी उनको बहुत आदर मिला। वहाँ के लोग भी कवि को देखने के लिये टूट पड़े। वहाँ पर बहुत से हिन्दुस्तानी लड़के पढ़ते थे। उन लोगों ने आकर कवि को घेर लिया। सब के सिर पर हिन्दु-स्तानी साफा था। रवीन्द्रनाथ कभी विलायती पोशाक नहीं पहनते थे। उनका चेहरा, उनका शानदार लम्बा जोब्बा, सफेद लम्बे घुँघराले बाल, सफेद डाढ़ी-मूँछ—सब कुछ देखने लायक था। लोग उनको देखकर खुश हो जाते थे। ताली पीट-पीट कर खुशी जताते थे। उनके बोलने का ढंग बहुत सुन्दर था और उनकी आवाज बड़ी मीठी थी। लोग इतने मोहित हो जाते थे कि कभी-कभी झुककर रवीन्द्रनाथ के जोब्बा का किनारा चूमते थे, उनको दूसरे यीशु समझकर पूजते थे।

रवीन्द्रनाथ जहाँ पर भी गए शान्ति की वाणी सुनाई। लोगों को याद दिलाया कि "हम सब भाई-भाई हैं। कोई अमीर, कोई गरीब नहीं है। मनुष्य-मनुष्य में कोई भेद नहीं है। भाई के साथ द्वेष नहीं करना चाहिये; उससे लड़ना नहीं चाहिये। प्यार से मिल कर रहना चाहिये। प्रेम व भाईचारे का बर्ताव दुनिया में सबसे बड़ी सीख है।"

इसी प्रकार इन्सानियत की सच्ची सीख रवीन्द्रनाथ दुनिया के लोगों को देते थे।



## एशिया सफर ●

यूरोप से लौट कर रवीन्द्रनाथ चीन देश को गए। वहाँ के पेकिंग विश्वविद्यालय ने उनको बड़े आदर से बुलाया था। रास्ते में वह रंगून, सुमात्रा, बाली, जावा, वगैरह भी गए। चीन में तो चीनी लोगों ने उनका इतना आदर किया कि मानों कहीं के महाराजा हों। रवीन्द्रनाथ ने खुद मजाक करके कहा था—"वहाँ हमारे साथ वालों को बरातियों की तरह आदर मिला था।" फौजी अफसर उनकी देखभाल करते थे। स्टेशन-स्टेशन पर खबर ली जाती थी कि उन लोगों को कोई तकलीफ तो नहीं रही है। चीन के विद्यार्थी लड़कों ने रवीन्द्रनाथ को सिर पर रखा था। उन लोगों की प्रार्थना पर चीनी सरकार ने रवीन्द्रनाथ और उनके साथियों को चीन के महाराजा के महल के पास रहने दिया था। रवीन्द्रनाथ ने चीन में चीन व भारत के बहुत पुराने रिश्ते के बारे में भाषण दिया था। हिन्दू-चीनी भाई-भाई की वाणी का प्रचार किया।

चीन के पिछले बादशाह हुआन् तांगने—जो गद्दी से हटाये गये थे रवीन्द्रनाथ का आवभगत किया था। अपने महल में बुलाकर उनके साथ घन्टा भर बातचीत की थी। रवीन्द्रनाथ को महाराज ने एक बहुत ही पुरानी तस्वीर भेंट की थी। यह तस्वीर करीब चार सौ साल पुरानी थी।

रवीन्द्रनाथ ने चीन के लोगों से कहा था—"भाई मैं एक मामूली कवि हूँ। लेकिन मैं इन्सान हूँ और इन्सान के नाते तुम्हारे सामने खड़ा हूँ। मेरे दिल में तुम सबके लिये जगह है। तुम लोगों ने भी मुझे प्यार से अपनाया है। बराबर के लोगों में ही प्यार हो सकता है। मैं तुमसे बड़ा नहीं, बराबर का हूँ।"

चीन देश में रहते समय रवीन्द्रनाथ की सालगिरह का दिन



आया था। चीनियों ने बहुत शान से उनकी सालगिरह मनाई। नए कपड़े और भी बहुत सी चीजें उनको दीं। नीले रंग का रेशमी पैजामा, नारंगी रंग का लम्बा रेशमी कुर्ता और बैंजनी रंग की सुन्दर टोपी—यह पोशाक रवीन्द्रनाथ को पहनना पड़ा। लोग उनको इस पोशाक में देखकर बहुत खुश हुए थे। चीनियों ने उनको एक नया नाम दिया था "चु-चेन-तांग" यानी "वज्र के समान शक्तिशाली भारत-सूर्य"।

## ● फिर यूरोप में

दो-एक साल बाद रवीन्द्रनाथ को फिर यूरोप जाना पड़ा। यूरोप के लोग धन-दौलत, आराम व ऐश लेकर ही मस्त थे। धर्म व परलोक की बात वे भूल गए थे। रवीन्द्रनाथ ने उनको आत्मा-परमात्मा की बातें सुनाईं। उन लोगों से कहा कि धर्म में ही सच्चा सन्तोष व शान्ति है। इसीलिए धन-दौलत का मोह छोड़कर धर्म को अपनाना चाहिए। यूरोप के लोग रवीन्द्रनाथ की बातें सुनकर बहुत खुश होते थे। उनका सुन्दर, ऋषियों की तरह शान्त चेहरा देखकर वे उनको एक महात्मा मानते थे।

अब की बार रवीन्द्रनाथ सबसे पहले इटली गए। वहाँ की आम जनता को छोड़कर बड़े-बड़े सरकारी अफसरों ने भी उनका स्वागत किया। वे इटली की राजधानी रोम गए। वहाँ इटली के शासक मुसोलिनी ने उनसे मिलकर कहा—"मैं बड़े प्रेम से आपकी किताबें पढ़ता हूँ। मुझे आपकी किताबें बहुत पसंद हैं।" रवीन्द्रनाथ वहाँ सरकार के मेहमान होकर रहे थे। उनके लिये सरकार ने अलग से खास इन्तजाम किया था। राजा-महाराजाओं के सिवाय दूसरे किसी के लिये ऐसा इन्तजाम नहीं किया जाता।



इटली से रवीन्द्रनाथ स्वीट्जरलैंड गए थे। वहाँ के पहाड़ों की शोभा देखने लायक है। फिर रवीन्द्रनाथ यूरोप के दूसरे शहरों में भी घूमे। सभी जगह पर उनको बहुत आदर-सत्कार मिला। रवीन्द्रनाथ के मुख से यूरोप के लोगों ने सुना कि भारत कितना महान् देश है। इसकी सभ्यता कितनी पुरानी है। इसकी मिट्टी के कण-कण में कैसी सच्ची सीख फैली हुई है। भारत से ही यूरोप के लोगों ने कितनी विद्या सीखी थी। यूरोप के लोग जब जंगली, और असभ्य थे भारत उस समय एक बहुत बड़ा सभ्य देश था। भारत के लोग अपने जहाजों पर चढ़कर आसपास के देशों में जाते थे। वहाँ अपनी शिक्षा व संस्कृति फैलाते थे।

१९३० ई० में रवीन्द्रनाथ सबसे पहले रूस देश गए थे। उस समय रूस देश में सभी बातें कुछ अलग ढंग की ही थीं। रूसियों ने अपने राजा को सिंहासन से हटा दिया था। वहाँ पर बड़ा भारी गदर मचा था। प्रजा ने सारा अधिकार अपने हाथ में ले लिया था। प्रजा के चुने हुए लोग वहाँ राज्य चलाते थे। वहाँ की जनता के लिये जितने कारखाने हैं, रवीन्द्रनाथ ने उन सब को देखा था। वहाँ पर खेती करने का तरीका भी फर्क था, समवाय पद्धति से वहाँ खेती होती थी। आजकल हमारे देश में भी कहीं-कहीं पर कांग्रेस सरकार ने इस समवाय पद्धति की खेती को चालू किया है। रूस की इन नई पद्धतियों को देखकर रवीन्द्रनाथ बहुत खुश हुए थे। उस देश की एक दूसरी बात रवीन्द्र को बहुत पसंद आई थी वह थी वहाँ के लोगों में बराबरी की भावना। वहाँ कोई अमीर कोई गरीब नहीं। जो जितना मेहनत करेगा, उसे उतना पैसा मिलेगा। बीच में मालिक का कोई हक नहीं रहेगा। मालिक मजदूर का रिश्ता वहाँ बहुत अच्छा है। पूँजीपति वहाँ गरीबों को सता नहीं सकते। वहाँ का यह सब इन्तजाम बहुत अच्छा है। गदर के बाद



वहाँ का समाज बिल्कुल ही बदल गया। रूस में रहते समय रवीन्द्रनाथ वहाँ से बहुत चिट्ठियाँ घर पर लिखा करते थे। उन चिट्ठियों में से रूस देश की सच्ची झलक मिलती है।

## ● असहयोग, चरखा व रवीन्द्रनाथ

रवीन्द्रनाथ के भीतर देश-प्रेम कूट-कूट कर भरा था। बचपन से उन्होंने देश की आजादी के लिये आन्दोलन किया था। गान्धीजी के आन्दोलन से भी वह सहमत थे। अंग्रेज सरकार की एक-एक सख्ती की वह बुराई करते थे। जब मौका मिला देश के रहने वालों से सच्चे इन्सान बनने के लिये कहते थे। वह जानते थे कि क्रान्ति से आजादी नहीं मिलती। और मिलने पर भी देर तक नहीं टिकती। मनुष्य की आत्मा के भीतर ताकत होनी चाहिये। उसी ताकत से वह सच्ची आजादी हासिल कर सकता है।

गान्धीजी का आन्दोलन अहिंसा था। रवीन्द्रनाथ को यह पसन्द था। फिर गान्धीजी ने अंग्रेज सरकार के साथ असहयोग शुरू किया। लड़के, लड़कियाँ स्कूल, कालेज छोड़ने लगे। उनमें से कोई-कोई देश की सेवा के काम में जुट गए। बाकी आवारा बन गए। रवीन्द्रनाथ इस बात के खिलाफ थे। आजादी हासिल करने के लिये लड़कों को भड़काना वह पसन्द नहीं करते थे। उनकी यह राय थी कि सबको अपने लिये सोचने का मौका मिलना चाहिये। बच्चों को बिना सोच-समझकर कुछ काम नहीं करना चाहिये। जोश में आकर स्कूल छोड़ना, विलायती कपड़े जलाना, चरखा चलाना—यह सब रवीन्द्रनाथ पसन्द नहीं करते थे। गाँधीजी के साथ रवीन्द्रनाथ का इन बातों पर बहुत बहस हुआ था। रवीन्द्रनाथ



केवल एक बात कहते थे—जबर्दस्ती से आजादी नहीं मिलती। किसी के ऊपर जबर्दस्ती नहीं करनी चाहिये।

चरखा कातकर स्वराज मिलेगा यह रवीन्द्रनाथ विश्वास नहीं करते थे। चरखा कातना बहुत अच्छा है। इससे बहुत फायदा भी हो सकता है। लेकिन रवीन्द्रनाथ सोचते थे केवल चरखा कातकर इतने बड़े देश को आजाद कैसे किया जा सकता है? और देशों से हमारे देश में बहुत उलझनें हैं, बहुत कठिनाइयाँ भी हैं। पहले उन सब का हल होना चाहिये।

रवीन्द्रनाथ विलायती कपड़ा जलाने के भी खिलाफ थे। वह कहते थे—"गांधीजी मशीनों के खिलाफ हैं—मैं भी हूँ। लेकिन हमारी सब बुराइयों की जड़ है हमारी भीतरी कमजोरी। हम चलने से, बोलने से, हँसने से भी डरते हैं। अंग्रेज सरकार के हुक्म पर हम उठते-बैठते हैं। हमारी अपनी ताकत कुछ भी नहीं है। हम कायर हैं; किसी की मदद करने में भी हमें डर लगता है। इस जबर्दस्ती के हुक्म के मैं खिलाफ हूँ। और गांधीजी लोगों पर वैसा ही हुक्म चला रहे हैं। देश को वह आजाद करना चाहते हैं। लेकिन देश के लोगों के आजाद-विचार पर वह हुक्म चला रहे हैं। इस तरह से हमें आजादी शायद मिल भी जाय पर हम सच्चे आजाद नहीं बनेंगे।"

गांधीजी कई बार रवीन्द्रनाथ से मिले। दोनों की घन्टों बात-चीत भी होती थी। मतभेद होने पर भी दोनों में बहुत प्रेम था। जब-जब सरकार गांधीजी को कैद में डाल देती थी, रवीन्द्रनाथ को बहुत दुःख होता था। यरवदा जेल मे गांधीजी ने भूख हड़ताल की थी। रवीन्द्रनाथ खबर पाकर पूना गए। उन्होंने गांधीजी को छोड़ देने के लिए विलायत में सरकार के पास तार भेजा। सरकार के साथ समझौता होने पर गांधीजी ने भूख हड़ताल छोड़ दी। रवीन्द्रनाथ



उस समय बराबर गांधीजी के बिस्तर के पास बैठे रहते थे। गांधी जी को रवीन्द्रसंगीत बहुत पसंद था। रवीन्द्रनाथ ने गांधीजी के पास बैठकर उस दिन एक सुन्दर रवीन्द्र संगीत गाकर सुनाया था।

## ● चित्रकार रवीन्द्रनाथ

रवीन्द्रनाथ केवल कवि नहीं बहुत बड़े चित्रकार भी थे। कम उम्र में वह कभी-कभी तस्वीर बनाने में मस्त हो जाया करते थे। परन्तु एकाएक करीब सत्तर साल की उम्र में वह चित्र खींचने लग गए थे। उन्होंने करीब दो हजार से भी ज्यादा चित्र बनाए थे। भारत में ही नहीं, यूरोप व अमरीका के अनेक शहरों में उनके चित्रों की प्रदर्शनी हुई थी और अब भी होती है। रवीन्द्रनाथ के चित्रों को देखकर लोग विस्मित हो जाते हैं। आम तौर पर कोई भी चित्रकार किसी नियम या पद्धति पर चित्र बनाता है। लेकिन रवीन्द्रनाथ इस बात में भी निराले थे। वह कोई पद्धति नहीं मानते थे। रंग लगाने का भी उनका कोई खास नियम नहीं था जो मन में आता वही खींचते थे। चाहे जो भी रंग हो इस्तेमाल करते थे। गाढ़ा रंग उनको ज्यादा पसन्द था। चित्र बन जाने पर देखकर लोग ताज्जुब में हो जाते थे।

रवीन्द्रनाथ कविता लिखते थे। जो शब्द या लाईन पसंद नहीं आती थी वह उन्हें काट देते थे। उनका काटने का ढंग भी निराला था। गन्दगी उनको पसंद नहीं थी। इसीलिये काटकूट करते समय वह इतने सुन्दर ढंग से लाइनें खींचते थे कि सुन्दर नकशा बन जाता था। देख कर रवीन्द्रनाथ बच्चों की तरह खुश हो जाते थे। इसी तरह रवीन्द्रनाथ धीरे-धीरे चित्र बनाने में मस्त हो जाने लगे। कभी-कभी तो वह देखते भी नहीं थे कि कौन रंग लगा रहे हैं। जो भी रंग हो,



जैसे भी हो चित्र बन जाता था। देखकर बड़े-बड़े चित्रकार दंग रह जाते थे। कोई विश्वास नहीं करते थे कि ये चित्र किसी बहुत बड़े चित्रकार के हाथ से नहीं बने। यही थी रवीन्द्रनाथ की खूबी। जिस काम में उन्होंने जब हाथ लगाया वही बहुत सुन्दर निकल आता था।

अगर देखा जाय तो रवीन्द्रनाथ ने कभी चित्र बनाना नहीं सीखा था। फिर भी वह बहुत सुन्दर चित्र खींचते थे। अपने चित्रों का उन्होंने कभी कोई नाम भी नहीं दिया। किसी बात को सोचकर भी वह चित्र नहीं बनाते थे। कभी-कभी तो वह "ब्रश" का भी इस्तेमाल नहीं करते थे। बच्चों की तरह उंगली से रंग पोतते थे। जैसे—टेढ़ी मेढ़ी लकोरों से एक चेहरा बनाया गया। वह चेहरा बिल्कुल सुन्दर नहीं। लेकिन उसी बदसूरत चेहरे में रवीन्द्रनाथ बहुत ही सुन्दर दो आँखें बना देते थे। उन दोनों आँखों में दुनिया की खूबसूरती इकट्ठा होती थी। नाक-नकशे का चेहरा न होकर वह मानो मन का चेहरा होता था। तभी बड़े-बड़े चित्रकार रवीन्द्रनाथ के चित्रों की बहुत तारीफ करते हैं। अपने चित्रों में रवीन्द्रनाथ ने अरूप को रूप दिया है।

## घर गृहस्थी में ●

रवीन्द्रनाथ का चेहरा बहुत शानदार था। देखने से लगता था कि कहीं के राजा-महाराजा होंगे। वह बहुत गम्भीर भी थे। साथ ही वह बड़े सीधे-सादे भलेमानस थे। गुस्सा उनको बहुत कम आता था। गुस्सा करके फिर शर्मिन्दा हो जाते थे।

बचपन से ही रवीन्द्रनाथ का रहन-सहन बहुत ही सादा था। इतने बड़े अमीर खानदान का लड़का—लेकिन उनका पहनावा, खानापीना सब बहुत ही मामूली था। जब वह अपने पिता के साथ



हिमालय पहाड़ पर गए थे तभी पहली बार उन्होंने शानदार, जरी की पोशाक पहनी थी।

बच्चों को वह बहुत प्यार करते थे। बच्चे हमेशा निडर होकर उनके पास जाते थे, बातें करते थे। बच्चों से बात करने में, उनके सवालों के जवाब देने में रवीन्द्रनाथ कभी थकते नहीं थे। बच्चों के साथ वह खुद बच्चा हो जाते थे। विश्व कवि होकर भी उन्होंने बच्चों के लिये कितनी ही बहुत सुन्दर कवितायें लिखी थीं। बच्चों के लिये उनके दिल में माँ को जैसी ममता थी। बच्चों के प्रति उनकी बहुत हमदर्दी भी थो। दो-एक उदाहरए से यह बात स्पष्ट हो ी।

बच्चा चाँद को देखता है। तारे उसे बुलाते हैं। वह सोचता है जाऊँ कि न जाऊँ।

अगर जाऊँ भी, लौटना तो पड़ेगा ही  
माँ जो हैं मेरे घर में;  
बैठी हैं मेरे ही लिये,  
उन्हें छोड़कर तारों के पास कैसे रहूँगा ?

बच्चा खेलता रहता है। फिर न जाने क्या सोचकर वह माँ से आकर लिपट जाता है। कहता है—

"अरी माँ, मेरी अच्छी माँ, तू चुप क्यों बैठी है ?  
तू क्या चाहती है ?  
माँ, तू सोना लेगी ? मोतियों की माला ?  
क्या लाऊँ माँ तेरे लिये ?  
तू सोच मत माँ,  
जहाज लेकर मैं जाऊँगा समन्दर पार—  
और तेरे लिये लाऊँगा—  
जानती हो माँ, क्या लाऊँगा ?



मैं लाऊँगा तेरे लिये
डिबिया में भर कर
कीमती मोतियों का जोड़ा !

माँ के साथ बच्चा कितना खेल खेलता है ! माँ होंगी चाँद, वह होगा बादल । बाहें फैलाकर माँ को वह ढँक देगा ! वह होगा लहर– माँ होंगी तट । माँ की गोद में वह चुपके से आकर लुढ़क पड़ेगा । ऐसी ही कितनी सुन्दर, मन को मोहने वाली कवितायें रवीन्द्रनाथ ने बच्चों के लिये लिखी हैं ।

बच्चों को वह बहुत सुन्दर चिट्ठियाँ भी लिखते थे । इन चिट्ठियों को पढ़ कर कौन नहीं कहेगा कि रवीन्द्रनाथ दुनिया के श्रेष्ठ महाकवियों में एक हैं । किसी छोटी सी लड़की की चिट्ठी के जवाब में रवीन्द्रनाथ ने लिखा था—

"क्या तुम सोचती हो तुम्हारे वहाँ ही मजेदार बातें हुई थीं । तुम मुझे हरा नहीं सकोगी । हमारे यहाँ कैसा मजा हुआ था सुनोगी ? हमारे यहाँ मेला हुआ था । उसमें करीब दस हजार आदमी इकट्ठे हुए थे । चारों ओर शोरगुल, चहल-पहल थी । बच्चों का रोना, बड़ों की चीख-पुकार, ढोलक की आवाज, बैलगाड़ियों के पहिए की विचित्र आवाज, आतशबाजी की साँय-साँय, पटाके का फट्-फट्, पुलिसंवालों का हो-हल्ला, रोना, गाना, झगड़ा सब मिलकर वह बड़ा शानदार मेला था । कितने किस्म की खाने की चीजें बिक रही थीं । बच्चों ने झूले पर झूला । एक जन ने मूँगफलियों से गुड़िया बनाई थी । एक-एक गुड़िया छः छः आने पर बिकी । छोटी-छोटी लड़कियों ने चिथड़ों से रूमाल बनाया था । मुझसे आकर कहा—"यह रूमाल आठ आने का है । आपको लेना होगा ।" कहकर जबर्दस्ती मेरे जेब में डाल दिया । तुमने कभी सुना भी है कि चिथड़े का रूमाल आठ आने



पर बिकता है ? तो सोचो किसके यहाँ मजा ज्यादा था ? तुम्हारे, या हमारे ?"

अपने खाने-पीने के बारे में रवीन्द्रनाथ की आदत बड़ी अजीब थी। उनको कभी-कभी सनक उठती थी। एक बार ख्याल हुआ केवल उबली हुई चीजें खाएँगे। फिर जी चाहा सूखा खाना जैसे लाई-लावा, चिउड़ा, सत्तू ये सब खाएँगे। फिर एकाएक मन में आया कि कच्ची सब्जी खाया करेंगे। इसी तरह जैसा मन होता खाते थे। अपने पर ही यह सब परखा जाता था। दूसरों को कभी खाने नहीं कहते थे। एक बार नीम की पत्तियाँ खाने का मन हुआ। चावल में नीम की पत्ती, तरकारी मे नीम की पत्ती : नीम की पत्तियों का शरबत—सब कोई देखकर दंग हो जाते थे। रवीन्द्रनाथ स्वाद ले लेकर खाते थे। ऐसी मजेदार उनकी आदतें थीं।

रवीन्द्रनाथ बहुत मजाकिया भी थे। बातचीत में वह बहुत मजाक किया करते थे। लेकिन ऐसे मजाक वह केवल अपने बहुत अजीजों से करते थे। जो लोग उनके आस-पास रहते थे उनके साथ वह सदा रसभरी बातें करते थे। सबको हँसाते थे, खुद भी हँसते थे। बुढ़ापे में एक बार उनकी आँख में कुछ तकलीफ हुई थी। एक लड़की उनकी आँख में दवा डाल देती थी। दवा डाल देने के बाद आँख से बहुत पानी बहता था। इसीलिए उस लड़की को देखते ही कवि कहते थे—"आओ आओ, तुम तो मुझे रुलाने आई हो ! कोई बात नहीं। इतिहास में तुम्हारा नाम रह जायगा कि यह लड़की रवीन्द्रनाथ को रुलाती थी !"

रवीन्द्रनाथ का एक नौकर था। उसका नाम था वनमाली। रवीन्द्रनाथ हमेशा उसे मजाक करके पुकारते थे। नीलमनि या लील-मनि के मरने से कई साल पहले से वह अपने पास रुपये-पैसे नहीं रखते थे। जरूरत की चीजें मिलने पर ही वे खुश हो जाते थे। पुत्र



# शिक्षा ●

बचपन में घर पर ही मास्टर के पास रवीन्द्रनाथ ने पढ़ना शुरू किया था। उस समय वह बहुत ही छोटे थे। उनसे बड़े भाई लोग घर की गाड़ी पर स्कूल जाया करते थे। स्कूल जाने के लिये जितना नहीं उतना गाड़ी पर चढ़ कर घर से बाहर जाने का शौक रवीन्द्रनाथ को बहुत था। वह भी स्कूल जाने के लिये रोते थे। उनके रोने-धोने से परेशान होकर उनके मास्टर साहब ने एक दिन उनको एक थप्पड़ मारकर कहा था—"अब स्कूल जाने के लिये रोते हो; एक दिन ऐसा आएगा कि स्कूल न जाने के लिए ऐसे ही रोओगे।"

मास्टर साहब की बात बिल्कुल सच निकली। रो-धोकर बालक रवि स्कूल में भर्ती हो गया। वहाँ का रंग-ढंग ही अलग था। सबक याद न होने से वहाँ बेंच पर खड़ा कर दिया जाता और हाथ पर बहुत-सी तख्तियाँ रखी जातीं। वहाँ बालक रवि ने बहुत दिन नहीं पढ़ा। वहाँ से उसे किसी नार्मल स्कूल में भर्ती करा दिया गया।

इस स्कूल का वातावरण भी बालक रवि को पसन्द नहीं आया। उसका मन था बहुत कोमल। किसी प्रकार की सख्ती वह बर्दाश्त नहीं कर सकता था। उसका जी उस स्कूल में ऊबने लगा। बच्चों से भी उसकी दोस्ती नहीं हो सकी। छुट्टी के वक्त बस अकेला चुपचाप सड़क के पास एक खिड़की में बैठकर सड़क पर आने-जाने वाले लोगों को देखता था। उस स्कूल में एक ऐसे मास्टर थे जिनकी बात बड़े होकर भी रवीन्द्रनाथ नहीं भूल सके। अपनी कई कहानियों में रवीन्द्रनाथ ने उसी मास्टर के बर्ताव का चित्र खींचा था। यह मास्टर साहब इतनी बुरी तरह से बच्चों से बोलते थे



रथीन्द्रनाथ, बहू प्रतिभादेवी, धेवती नन्दिता देवी ही सदा बच्चे की तरह उनकी सेवा व देखभाल करते थे। इसके अलावा और भी लोग थे जो सदा इन पर निगरानी रखते थे।

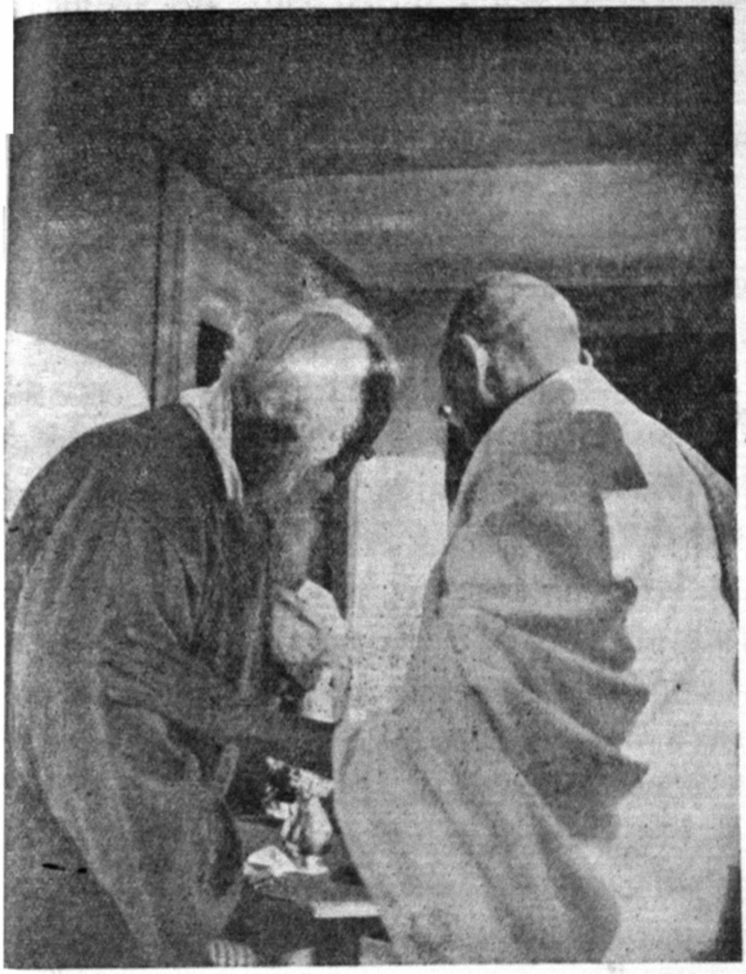
## आखीर के कई साल

शान्तिनिकेतन की विश्वभारती की चिन्ता से रवीन्द्रनाथ बुढ़ापे में भी चैन से बैठ नहीं सकते थे। पछहत्तर साल की उम्र में रवीन्द्रनाथ विश्वभारती के लिये चन्दा इकट्ठा करने के लिए उत्तरी भारत में घूमने निकले। पटना व इलाहाबाद होकर रवीन्द्रनाथ दिल्ली गये। इस बुढ़ापे में उनकी परेशानी देखकर गान्धी जी के मन में दया आई। तब गान्धी जी के कहने पर दिल्ली के कई रईसों ने कवि को विश्वभारती के लिये साठ हजार रुपये दिये। कवि खुश होकर शान्तिनिकेतन चले आये।

साम्प्रदायिक बटवारे के खिलाफ कलकत्ते में एक बड़ी भारी सभा की गई थी। रवीन्द्रनाथ उस सभा के सभापति थे।

१९३७ ई० में कलकत्ता विश्वविद्यालय के कॉनवोकेशन में भी रवीन्द्रनाथ ने भाषण दिया था। यह भाषण पहली बार बँगला भाषा में दिया गया था। उसी साल एक धर्म-महासम्मेलन भी हुआ था जिसके रवीन्द्रनाथ सभापति हुए थे। उसी साल १४ अप्रैल को शान्तिनिकेतन में 'चीन-भवन' खोला गया था। वहाँ चीनी भाषा सिखाई जाती है।

इसी तरह काम करते हुए रवीन्द्रनाथ के दिन बीत रहे थे। बुढ़ापे के कारण अब उनकी तन्दुरुस्ती बिगड़ने लगी। जनम भर वह कभी बीमार नहीं पड़े। इस बात के लिये उनको घमंड था। उसी साल रवीन्द्रनाथ सख्त बीमार पड़ गए थे। कलकत्ते से बड़े-बड़े



गुरुदेव और गाँधीजी

डाक्टर उनके इलाज के लिये शान्तिनिकेतन आए थे। कुछ दिन बाद वह स्वस्थ हो गए और कलकत्ते आ गए। वहाँ गान्धी जी, जवाहरलाल नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस वगैरह उनसे मिले थे।

१९३९ ई० में पंडित जवाहरलाल नेहरू से शान्तिनिकेतन में



इधर वह कान से भी कम सुनने लगे। लोग उन्हें गाना सु थे। वह अच्छी तरह सुन नहीं पाते थे।

जाड़ा खत्म हो गया। बसन्त आने लगा। रवीन्द्रनाथ का 'होली' के लिये उचाट होने लगा। फागुन के महीने में शान्तिनिके में बड़े शानदार नाच-गाना नाटक का उत्सव होता था। अब बार भी रवीन्द्रनाथ ने सबको बुला-बुला कर इन्तजाम करने कहा। होली के दिन शान्तिनिकेतन के मशहूर 'आमबाग' में ना गाना व नाटक हुआ। किसी बात की कमी नहीं थी। फिर भी जाने क्यों सब का चित्त उदास था। हवा में, चाँदनी में भी मा उदासी छाई हुई थी। उस समय किसी ने भी इस उदासी का कार नहीं समझा था।

फागुन बीत गया। बैशाख आया। इसी बैशाख में रवीन्द्रना की आखिरी साल-गिरह मनाई गई। दूसरा कोई भले न समझे— रवीन्द्रनाथ समझ गए थे कि अब वह थोड़े ही दिनों के मेहमान हैं यही इस दुनिया में उनकी आखिरी साल-गिरह थी।

इस आखिरी साल गिरह पर बहुत धूमधाम हुई थी। बहुत चीजें उनको इनाम में मिलीं। फूल-फल से घर भर गया। रवीन्द्रनाथ को आम बहुत पसन्द था। इसीलिये दूर-दूर से लोगों ने आम उनको भेजा था पिछले साल भी वह दिन भर में कई आम खा जाते थे। लेकिन अब की बार बिल्कुल रुचि नहीं रही। बहुत कहने पर थोड़ा सा खाते थे

साँझ के समय साल गिरह के लिये वह सजा दिये गए। नन्दिता देवी ने उनको सफेद रेशमी धोती पहना कर गले में रेशमी चादर डाल दी। माथे पर थी चन्दन की अलका तिलक। गले में सुन्दर माला बहुत ही सुन्दर दिख रहे थे। पहियेदार कुर्सी पर बिठा कर वह वहाँ लाए गए जहाँ सब इन्तजाम हुआ था। शान्तिनिकेतन, श्रीनिकेतन से हाथ की बनी हुई तरह-तरह की चीजें कवि को दी गईं। लड़कियों



जब सब चीजें उनके पैर के चारों तरफ सँजो दीं तब किस के न में यह बात आई होगी कि यह आखिरी भेंट है ? उनके सामने ही उनकी आखिरी सालगिरह मनायी जा रही थी। लेकिन रवीन्द्रनाथ जानते थे। उन्होंने आखिरी कविता में आने वाली मौत के बारे जता दिया था। सारी कार्यवाही उस दिन अच्छी तरह हो गई थी। रवीन्द्रनाथ ने आखिर तक बैठ कर खुशी मनाई थी।

इसके बाद बारिश के महीने आए। रवीन्द्रनाथ की तबियत भी धीरे-धीरे गिरने लगी। वह खुद महसूस करने लगे कि उनका दिया बुझनेवाला ही है। सब से कहते थे—"अब मेरे गिनती के दिन रह गए हैं। मेरे जाने का समय हुआ।" बहू से कहते थे—"तुम सब को छोड़कर जाने का समय आया है। मुझे कोई दुख नहीं है। तुम सब अच्छे रहो। मेरे शान्तिनिकेतन को देखना। इसका जिम्मा मैं तुम सब पर छोड़े जा रहा हूँ।

१६४१ साल—जून का महीना। रवीन्द्रनाथ फिर सख्त बीमार पड़ गए। डाक्टरों ने उनको आपरेशन के लिये कलकत्ता लाना चाहा। २५ जुलाई को रवीन्द्रनाथ शान्तिनिकेतन छोड़कर कलकत्ता गए। यही उनका आखीरी जाना था। वह फिर कभी अपने प्यारे शान्तिनिकेतन में लौट नहीं आए।

रवीन्द्रनाथ ने शान्तिनिकेतन के बच्चों के लिये एक खास गीत लिखा था—"हमारा शान्तिनिकेतन !

सब से अपना, सबसे प्यारा
शान्तिनिकेतन हमारा !"

रवीन्द्रनाथ को बिदा देते समय बच्चों ने यह गीत गाकर आखीरी बार उनको प्रणाम किया।

३० जुलाई को उनका आपरेशन हुआ था। दो दिन थोड़े अच्छे



थे । फिर धीरे-धीरे तबियत बिगड़ने लगी । अब किसी के मन में भ
उम्मीद नहीं थी ।

१९४१ का ६ अगस्त । वह थी सावन पूनो की रात । आस
मान पर बादलों के साथ चाँद की आँखमिचौनी चल रही थी । राखी
पूर्णिमा सब के मन में यही भय था कि मौत आज आकर रवीन्द्रनाथ
के हाथ में राखी बाँध देगी ? घर भर में एक अजीब सन्नाटा छाया हुआ
था । लोग दबे पाँव आते जाते थे । फुसफुसाकर बातें कर रहे थे ।

रात बीत गई सबेरा हुआ । जहाँ जितने परिचित, मित्र, रिश्ते
दार थे एक-एक करके आखिरी दर्शन के लिये आने लगे । रवीन्द्रनाथ
बहुत धीरे-धीरे साँस ले रहे थे । एक साथी बूढ़े मित्र ने बिस्तर के
पास खड़े होकर प्रार्थना की । दूसरे ने संस्कृत में स्तोत्र पढ़ा । धीरे
धीरे साँस उखड़ने लगी । दोपहर के बारह बजकर दस मिनट पर
रवीन्द्रनाथ ने आखीरी साँस ली । वह था १९४१, सात अगस्त का
बृहस्पतिवार ।

भारत के रहने वालों के लिये रवीन्द्रनाथ सचमुच ही "जनगण-
मन अधिनायक" गुरुदेव थे ।